राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

प्रधान-सम्पादक
डॉ० पद्मधर पाठक
[निदेशक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर]

ग्रन्थांक-174

मानप्रकाश

सम्पादक
पं० किशनलाल दुबे

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर (राज.)
Rajasthan Oriental Research Institute, Jodhpur (Raj.)

1991

प्रथमावृत्ति–500 मूल्य–रु० 37.00

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

प्रधान-सम्पादक
डॉ० पद्मधर पाठक
[निदेशक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर]

ग्रन्थांक-174

मानप्रकाश

सम्पादक
पं० किशनलाल दुबे

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर (राज.)
Rajasthan Oriental Research Institute, Jodhpur (Raj.)

1991

प्रथमावृत्ति–500 **मूल्य–रु० 37.00**

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

प्रधान-सम्पादक
डॉ० पद्मधर पाठक
[निदेशक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर]

ग्रन्थांक-174

मानप्रकाश

सम्पादक
पं० किशनलाल दुबे

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर (राज.)
Rajasthan Oriental Research Institute, Jodhpur (Raj.)

1991

प्रथमावृत्ति–500 मूल्य–रु० 37.00

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

राजस्थान-राज्य द्वारा प्रकाशित

सामान्यतः अखिल भारतीय तथा विशेषतः राजस्थान प्रदेशीय पुरातनकालीन
संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, हिन्दी-राजस्थानी आदि भाषा-निवद्ध
विविध वाङ्मय प्रकाशिनी विशिष्ट ग्रन्थावली

प्रधान-सम्पादक
डॉ० पद्मधर पाठक

ग्रन्थांक-174

सम्पादक
पं० किशनलाल दुबे

प्रकाशक
राजस्थान-राज्य-संस्थापित
राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

विक्रमाब्द 2048 ई. सन् 1991

हिमालय प्रिन्टर्स, जोधपुर मूल्य रु. 37.00

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रधान सम्पादकीय

अपने पत्र दिनांक १९ जून १९८५ में प्रख्यात इतिहासविद् स्व. डा० रघुवीरसिंह सीतामऊ ने "मान-प्रकाश" नामक एक खण्डित संस्कृत ग्रन्थ की वकालत में लिखा था—"मेरे विचारानुसार यह समकालीन संस्कृत ऐतिहासिक रचना प्रकाशित हो जानी चाहिए। आशा है आप मेरे इस आग्रह पर सहानुभूतिपूर्ण विचार कर इसे प्रकाशित करने का निश्चय कर सकेंगे।...........इसे मैंने ध्यानपूर्वक देखकर उसमें आवश्यक संशोधन भी कर दिये हैं।"

उनके इस कथन ने ग्रन्थ के प्रकाशन को प्रोत्साहित अवश्य किया किन्तु रचना की अपूर्णता और उसके त्रुटित स्वरूप के कारण जगह-जगह जो दरारें पड़ी हैं उसके लिए हम विवश थे। इतिहास के लिए ग्रन्थ का प्रारम्भिक भाग तो निरा वायवीय है एवं अतिरंजना के स्थल भी सीध पकड़ में आ जाते हैं। पूरब और पश्चिमी सरहद पर हुए युद्धों का वर्णन, कुछ जगहों एवं व्यक्तियों का उल्लेख निश्चय ही "मान-प्रकाश" के मूल्य को बढ़ाता है। मानसिंह पर केन्द्रित "मान-चरित्र" अथवा "मानचरित्र-रासो" की तुलना में आलोच्य ग्रन्थ का महत्त्व अपेक्षाकृत अधिक है। मानसिंह के मंत्री के रूप में मुरारिदास का उल्लेख छानबीन का विषय तो बना रहेगा किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि मुरारिदास खत्री युद्ध-काल के दौरान मानसिंह के हाथ लगा था। अपने धरातल को मज़बूत करने के उद्देश्य से मैंने इस ग्रन्थ की सम्पादित प्रति विद्वद्वर पं० गोपालनारायण बहुरा को उनकी प्रस्तावना और दृष्टिपात के लिए भेज दी थी। उन्हें न केवल जयपुर के दुर्लभ पोथीखाने के हर गोशे की जानकारी है बल्कि कछवाहों के इतिहास से सम्बन्धित उनका आधिकारिक ज्ञान हमारा संबल बनता। उन्होंने कृपाकर जो प्रस्तावना भेजी थी वह संतुलित लेखन एवं खुले दृष्टिकोण की एक मिसाल है। उसे यहाँ मुद्रित किया गया है। औपचारिकता निभाते हुए उन्हें धन्यवाद देकर हम उनके ऋण को चुका नहीं सकते कारण उनकी गणना तो इस ग्रन्थमाला के उन्नायकों में हैं।

मानसिंह पर डा० राजीवनयन प्रसाद की स्वतन्त्र पुस्तक ★ में भी इस ग्रन्थ का उल्लेख नहीं मिलता है। इतिहास के शोधार्थियों को यहां उपलब्ध ऐतिह्य सामग्री को और आगे ले चलने की पूरी गुंजाइश है।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

डा० प्रभाकर शास्त्री ने अपने लेख "मानप्रकाश; एक अप्रकाशित ऐतिहासिक महाकाव्य" (शोध-पत्रिका, उदयपुर, वर्ष १८ : अंक १ सन् १९६७) में इसी कलकत्ता वाली प्रति से कुछ अंश उद्धृत किए हैं और इस ग्रन्थ की पूर्ण प्रति जयपुर में होने का संकेत भी किया है। प्राप्त जानकारी के अनुसार जयपुर में इसकी कोई प्रति उपलब्ध नहीं हैं। शास्त्रीजी द्वारा उद्धृत पाठ जहाँ-तहाँ प्रस्तुत पाठ से भिन्न है यद्यपि दोनों ने इसी प्रति को उठाया है। पाठ को संशोधित करने पर यह अन्तर पाया जाता है।

ग्रन्थ का सम्पादन सीतामऊ के पं० किशनलाल दुबे ने धैर्य के साथ डा० रघुबीरसिंहजी के निर्देशन में किया है एतदर्थ वे धन्यवाद के पात्र हैं। मुद्रण कार्य में हिमालय प्रेस, जोधपुर का सहयोग संतोषप्रद रहा है।

पद्मधर पाठक
निदेशक

जोधपुर
विजयादशमी
दिनांक १८-१०-६१

★ Raja Man Singh of Amber — R. N. Prasad,
The World Press Private Ltd.,
Calcutta, 1966

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

❋ भूमिका ❋

अति प्राचीनकाल में भारतवासियों में क्रमबद्ध इतिहास लिखने की परम्परा नहीं पाई जाती है, किन्तु तत्कालीन भारतीय साहित्य का अवलोकन करने से इतिवृत्तात्मक वर्णन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होते हैं। वेद, पुराण, शास्त्र, काव्य, नाटक, चम्पू, चरित्र आदि साहित्य के अनेक ग्रन्थों में इतिहास की प्रचुर सामग्री भरी हुई है, यहाँ तक कि पाणिनि के व्याकरण में भी इतिहास सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण प्रसंग उपलब्ध होते हैं। यह बात अवश्य है कि यह सामग्री विशृंखलित रुप में इन ग्रन्थों में सन्निविष्ट है।

इतिहास की परिभाषा

भारतीय साहित्य में इतिहास की परिभाषा—

धर्मार्थकाममोक्षाणामुपदेशसमन्वितम्।
पूर्ववृत्तं कथायुक्तमितिहासं प्रचक्षते॥

की गई है और पुराण के लक्षण—

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च।
वंशानुचरितं चैव पुराणं पंचलक्षणम्॥

बताये गये हैं।

इतिहास की सामग्री

अतः इस सिद्धांत के अनुसार वेदों, पुराणों, महाभारत, रामायणादि रचनाओं में इतिहास संन्निहित है। वर्तमानकाल में भी इन ग्रन्थों का तदर्थ उपयोग अनिवार्यतः हो जाता है। इसी प्रकार इतिहास सम्बन्धी सामग्री में चरित्र वर्णन के भी कई ग्रन्थों का प्रणयन हुआ है। प्रस्तरोत्कीर्ण लेखों, प्रशस्तियों आदि में भी इतिहास सुरक्षित है। संस्कृत, प्राकृत, पालो, हिन्दी तथा प्रान्तीय भाषाओं के ग्रन्थों में इतिहास एवं चरित्र ग्रन्थ लिखे गये, इनमें–

१) बाणभट्ट का 'हर्ष चरित', जिसमें थानेश्वर के वैसवंशी राजाओं का वर्णन है।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२) वाक्पतिराज का गउड़व 'गौड़वहो', जिसमें कन्नौज के यशोवर्मा मौखरी का वर्णन है।

३) पद्मगुप्त (परिमल) का 'नवसाहसांक चरित', जिसमें मालवे के परमारों का वर्णन है।

४) बिल्हण का 'विक्रमांकदेव-चरित', जिसमें कल्याण के चालुक्यों का वर्णन है।

५) जयानक का 'पृथ्वीराजविजय', जिसमें साँभर और अजमेर के चौहानों का वर्णन है।

६) सोमेश्वर की कीर्तिकौमुदी',।

७) जयसिंह सूरि और चारित्र सुन्दरगणि के अलग-अलग 'कुमारपाल चरित' जिनमें गुजरात के सोलंकियों का वर्णन है।

८) कल्हण और जोनराज की दो 'राजतरंगिणी', जिनमें काश्मीर का इतिहास है।

९) संध्याकर नंदी का 'रामचरित', जिसमें वंगाल के पालों का वर्णन है।

१०) आनन्दभट्ट का 'वल्लालचरित', जिसमें बंगाल के सेनों का वर्णन है।

११) मेरुतुंग की 'प्रवन्धचिंतामणि', जिसमें गुजरात के सोलंकी, चावड़ों तथा अन्य राजाओं के वर्णन हैं।

१२) राजशेखर सूरि का 'चतुर्विंशति-प्रबन्ध', जिसमें राजाओं, विद्वानों, धर्माचार्यों आदि के परिचय हैं।

१३) जयसिंह सूरि का 'हमीर महाकाव्य', जिसमें सांभर, अजमेर और रणथम्भोर के चौहानों का वर्णन है।

१४) गंगाधर कवि का 'मण्डलीक-काव्य', जिसमें गिरनार के कतिपय चूडासमा (यादव) राजाओं का इतिहास है।

१५) जयसोम का 'कर्मचंदवंशोत्कीर्तनकम्', जिसमें उदयपुर मेवाड़ के मेहता खानदान के पूर्वजों का वर्णन है।

१६) गंगाराम कवि का 'हरिवंश महाकाव्य', जिसमें प्रतापगढ़ राज्य के राजाओं का चरित्र है।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१७) पुण्डरीक विट्ठल की 'रागमंजरी', जिसमें जयपुर के राजाओं का परिचय है ।

१८) रणछोड़ भट्ट का 'अमरकाव्य', जिसमें मेवाड़ के राजवंश का महाराणा राजसिंह तक का विवरण है । आदि कई ग्रन्थ हैं ।

इसके अतिरिक्त प्रचलित भाषाओं में भी कई चरित्र-ग्रंथ हैं, जिनमें 'पृथ्वीराज-रासौ', 'हम्मीर-रासौ', 'वीसलदेव-रासौ', 'रतन-रासौ', 'वचनिका', 'वंशभास्कर', 'जयसिंह-चरित्र' आदि हैं. जिनसे इतिहास लेखन में अच्छी सहायता मिलती है* ।

'मान-प्रकाश' प्राप्ति का परिचय एवं रचनाकाल :—

इसी परम्परा में राय मुरारीदास रचित 'मान-प्रकाश' ग्रंथ है जिसमें आमेर के महाराजा मानसिंह की वीरगाथा का वर्णन हुआ है । 'मान-प्रकाश' की रचना कौनसे वर्ष में हुई ? इसका निश्चय नहीं हो सकता है, क्योंकि ग्रंथ खण्डित रूप में उपलब्ध हुआ है । प्रारम्भ, मध्य तथा अन्त के सभी प्रसंग खण्डित हैं । ग्रंथ का नाम आम्बेर के राजा मानसिंह के नाम से 'मान-प्रकाश' रखा गया और 'प्रकाश' के कारण अध्यायों को किरण कहा गया है । कोई भी किरण पूर्ण नहीं मिलती है । यही कारण है कि ग्रंथ के निर्माण समय का पता नहीं लग पाता है । इतना तो अवश्य निर्णय हो सकता है कि यह महाराजा मानसिंह के समय में ही रचा गया है । यह भी अनुमान समीचीन प्रतीत होता है कि यह रचना ई०सं० १६०४ के बाद की ही है क्योंकि इनमें पूर्वी बंगाल के एगारसिंदूर (वर्तमान नाम में मैमनसिंह जिला) तथा मघराज (अराकान) से युद्ध का वर्णन है जो ई. सं. १६०४ तक शांत हुआ । इसमें विद्रोही उसमान खाँ, केदारराय, ईसाखाँ आदि के साथ का संघर्ष और उनका दमन भी वर्णित है जो इसी अवधि में किया गया था । महाराजा मानसिंह का देहान्त ई. सं. १६१४ में हुआ, अतः इसकी रचना ई. सं. १६०४ और १६१४ के बीच कभी हुई होगी ।

रचनाकार का वंश परिचय :—

रचयिता का परिचय ग्रंथ द्वारा प्राप्त हो जाता है । प्रारम्भ में ही — "महत्तकः श्रीलमुरारिदासः स्वल्पप्रया" लिखा मिलता है तथा किरण (अध्याय) की समाप्ति पर पुष्पिका में—

---

*प्राचीन इतिहास की सामग्री, ना० प्र० प०, ई० स० १९०८-९ ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

'मुरारिदासेनेत्यादि मानप्रकाशे किरणों द्वितीय:' तथा 'इति श्रीराय-मुरारीदासकृते मानप्रकाशे उत्तरदिग्विजयो नाम चतुर्थः किरण:'।

से उसके नाम का स्पष्ट रूप से पता लग जाता है। कवि ने अपना तथा अपने वंश का परिचय भी संक्षेप में इसी ग्रंथ की चतुर्थ किरण में दे दिया है। मुरारीदास वड़हरा कुल में उत्पन्न हुआ था। इसके पिता का नाम परशुराम था। सम्भव है, परशुराम को सन्तान सुख जल्दी प्राप्त न हुआ हो क्योंकि उसे पुत्र कामनार्थ देव, गुरु और ब्राह्मणों की सेवार्चना करनी पड़ी थी—

"संतानकामस्त्रिदशानभीष्टान्
द्विजान् गुरून् शुद्धहृदा समर्चयन्।
लेभे सुतांस्त्रीनभिरामरूपान्
धर्मार्थकामानिव स क्रमेण ॥ किरण ४, श्लोक २६।

भाव यही कि बड़ी मान मिन्नतों के बाद तीन पुत्र प्राप्त हुए। इनमें बड़ा मुरारीदास, दूसरा शंकरदास और तीसरा सुन्दर (दास) थे। तीनों ही गुणी, वीर और विद्वान् थे।

सबसे बड़ा मुरारीदास का मानसिंह से परिचय हुआ और वह अपने विशिष्ट गुणों से मानसिंह का मित्र हुआ और मन्त्री पद पर भी नियुक्त किया गया—

"तं मंत्रिणं क्षत्रकुलप्रसूतं
विधाय भूमिरमणः प्रतस्थे ॥" किरण ४, श्लोक ३४।

आगे चलकर एक श्लोक में मुरारी की योग्यना, वीरता, धार्मिकता आदि का विस्तृत बर्णन किया गया जो आत्म-प्रशंसा की झलक देता है। किरण ४, श्लोक ३३।

मुरारीदास की जाति :—

इसके 'वड़हरा' वंश में उत्पन्न होने का उल्लेख मिलता है। बड़हरा वंश किन्हीं क्षत्रिय वंशों की सूची में नहीं पाया गया है। "क्षत्र-वंश-प्रसूत" पद से ही वह क्षत्रिय ही हो यह सहसा नहीं माना जा सकता। क्षत्र का अपभ्रंश छत्री और खत्री भी होते हैं, अतः सम्भवतः वह खत्रियों की ही जातियों में से एक जाति या वंश का हो सकता है।। खत्रियों में भल्ला, अरोड़ा, कपूर, धवन वेदी, वेरी, मेहरा, मेहरोत्रा, मलहोत्रा, खन्ना, टण्डन, सरीन, कक्कड़, सेजरा आदि अनेक वंश हैं। सम्भव है इन्हीं वंशों में से बडहरा भी एक वंश हो जिसमें मुरारीदास के वंश वाले थे। सम्भवतः वर्तमान काल में इस वंश नाम

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

का कोई रूपान्तर हो गया हो। उसके युद्ध में भाग लेने और वीर कार्य करने से ही वह क्षत्रिय हो ऐसी बात नहीं है। इतिहास में ऐसे कई प्रमाण हैं कि ब्राह्मणों और वैश्यों ने भी अपूर्व वीरता के कार्य किये हैं, और देश, जाति और धर्म की रक्षा में अपना बलिदान किया है। अतः यही निष्कर्ष समीचीन प्रतीत होता है कि राय मुरारीदास खत्री वंश का था और इस वंश का नाम बडहरा था। उस समय भी खत्री ऊंचे-ऊंचे पदों पर रहे हैं। उनमें राजा टोडरमल का नाम तो प्रसिद्ध है ही, जो स्वयं खन्ना वंश का खत्री था।

प्रथम किरण का विषय :—

'मान-प्रकाश' के प्रथम किरण में धार्मिक विषय की चर्चा है। इसमें जनन और मरण सम्बन्धी शौचाशौच पर विचार और विवेचन किया गया है। उनके प्रमाण में मनु, अंगीरा, पराशर, देवल, ब्रह्म-पुराण आदि के उद्धरण दिये गये हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों के लिये सूतक प्रवृत्ति और निवृत्ति के अलग अलग समय निरूपित किये गये हैं। इस विषय का मूल विषय से, जो एक चरित्र है, क्या सम्बन्ध है यह तब तक नहीं जाना जा सकता जब तक कि प्रथम किरण अविकल रूप से पूर्ण रूप में प्राप्त न हो। यहाँ तो प्रारम्भ के केवल तीन पृष्ठ ही उपलब्ध हैं यह भी निश्चित है कि यह अंश मान-प्रकाश का ही है क्योंकि इस प्रसंग में स्वयं कवि का नामोल्लेख हुआ है—

"........नि नाना स्मृतिप्रोक्तमतानि शुद्धयै
महत्तकः श्रीलमुरारिदासः स्वल्प प्रया.... ..."

यह प्रकरण कहाँ समाप्त होता है इसका भी पता नहीं लग सकता है।

दूसरी किरण के प्रारम्भ का भी पता नहीं चलता है, क्योंकि ग्रंथ-पत्रांक १७ से ही उपलब्ध है। यह दूसरी किरण का प्रसंग है क्योंकि दूसरी किरण की समाप्ति और पुष्पिका पत्रांक २७ ब में है, १७ से २७ तक अविकल रूप में पत्राँक प्राप्त हैं। इस किरण के प्रारम्भिक श्लोक नहीं है और सारे किरण में कहीं भी श्लोक संख्या का संकेत भी नहीं है इसलिए श्लोकों की क्रम संख्या और पूर्ण संख्या का अनुमान नहीं लग सकता, जैसाकि चतुर्थ किरण में बीच बीच में श्लोक संख्या उपलब्ध होती है, उससे आगे पीछे के श्लोकों की क्रमवार संख्या पूरी की जा सकती है।

राजा के गुण :—

इसी किरण में प्रारम्भ में राजा के गुण, स्वरुप और महत्त्व का वर्णन किया है। वह ईश्वर का रूप और विभिन्न देवताओं का अधिष्ठान माना गया है। प्रजापालन के कारण वह पूज्य और आदरणीय होता हैं। इसके लिये भी

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मनुस्मृति, महाभारत, भगवद्गीता आदि के उद्धरण प्रमाण में दिये गये हैं। इसी सिद्धान्त के अनुसार अकबर तथा मानसिंह को ईश्वर के अंश माने हैं। मुरारीदास स्वयं के लिये भी लिखता है कि—

"नाम्ना मुरारिर्मुरवैरिणोंशो"

अर्थात् मुरारी मुरवैरी (मुरारी कृष्ण) का अंश है। चतुर्थ किरण, श्लोक ३०

इसी किरण में अकबर का आम्बेर (जयपुर) के राजघराने से परिचय होकर घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हुआ। मानसिंह को बहुत बड़ा सम्मान प्राप्त हुआ, यहां तक कि उसको 'धर्म-पुत्र' बनाया, जो फारसी तवारीखों में 'फर्जन्द' लिखा गया है।

महाराणा के साथ युद्ध :—

अकबर ने मानसिंह को महाराणा को वश में करने के लिये सेना देकर नियुक्त किया। उसने महाराणा के साथ युद्ध किया। यहाँ युद्ध का स्थल और तिथि नहीं दी गई है किन्तु यह युद्ध हल्दीघाटी का ही है जो वि. सं. १६३३, आषाढ़ वि० ७, सोमवार ई. स. १५७६, १८ जून को हुआ था। इस समय तक मुरारी मानसिंह से मिला भी नहीं था। युद्ध का वर्णन अवश्य ही ओजपूर्ण और आलंकारिक है। इससे यही सिद्ध होता है कि यह रचना बहुत समय बाद अवकाश के समय की गई है।

महाराणा की सम्पत्ति :—

'मान-प्रकाश' से यह भी ज्ञात होता है कि महाराणा के पास अतुल सम्पत्ति सुरक्षित रही। यथा—

"राना भूपसुतं धनानि बहुशो रत्नानि वासांसि च........
नाना-देश-पदार्थमतुलान्नीत्वा प्रतस्थे ततः ।।" किरण २, श्लोक १५६

उदयपुर के इतिहास में यह प्रमाणित किया है कि महाराणा के पास बहुत सम्पत्ति थी। अमरसिंह, कर्णसिंह, जगतसिंह और राजसिंह के दान, प्रजाहित के कार्य, धर्म-स्थान निर्माण, तुलादान, युद्ध आदि में व्यय से भी यही सिद्ध होता-है कि महाराणा के पास अतुल सम्पत्ति थी, क्योंकि पीछे के महाराणाओं को तो धन-संग्रह का अवसर ही नहीं मिला था। शिलोत्कीर्ण लेखों और प्रशस्तियों से भी यह सिद्ध होता है। भामाशाह की ईमानदारी और स्वामी-भक्ति एक अपूर्व आदर्श थी कि उसने राज्यकोष को सम्भाले रखा, आंच नहीं आने दी और राणा को ज्यों की त्यों सौंप दीं।*

---

*ओझाजी—उदयपुर का इतिहास, जिल्द १, पृष्ठ ४६३-६६।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अन्य जातियों को वश में करना :—

महाराणा से युद्ध के बाद मानसिंह का अन्य राज्यों के लोगों का जीतना कहा है, यथा—मालवियों, वैदर्भों, द्रविड़ों, मलयों, द्वारका मण्डल के राजाओं, सौराष्ट्रों, तैलंगियों, चोलों, बीदर वालों आदि, परन्तु इसमें अतिशयोक्ति पाई जाती है, जो काव्यगत है और अपने आश्रयदाता का उत्कर्ष प्रकाशन ही है।

मानसिंह का मान और ऐश्वर्य :—

तीसरी किरण का प्रारम्भ उपलब्ध है - इसमें मानसिंह को जो भेंटे व उपहार प्राप्त हुए उनका विशद वर्णन है। महाराजा के वैभव-वर्णन तथा लक्ष्मी का विवरण दिया है।

उत्तर दिग्विजय का समय :—

चौथी किरण में उत्तर दिग्विजय का प्रसंग है। इसमें विजयार्थ आदेश का समय दिया हुआ है। यथा—

"रसाष्ट रन्ध्रे गणिते सनाख्ये।
राजानमाजानुभुजो दिदेश ॥" किरण ४, श्लोक ११।

इससे हिजरी सन् ९८६ होता है, जो कि सं. १६३५ और ई. स. १५७८ होता है। इसी विजय-यात्रा के समय मानसिंह से मुरारीदास की भेंट हुई है।

उत्तर दिग्विजय के राज्य :—

काश्मीर विजय ई. स. १५८६ में पूर्ण हुई थी। उसके पूर्व पंजाब के पर्वतीय अन्य राज्यों को शाही राज्य में मिला लिये गये होंगे। इनमें चम्बा, जम्मू और कांगड़ा के राज्य मुख्य हैं। इनके साथ-साथ इनसे निकले हुए शांबा, मानकोट, जसरोटा, दढवाल (दातारपुर , पैंठान (प्रतिष्ठानपुर), पठानकोट (नूरपुर), गुलेर, भड्डू आदि कई हैं। बाद में इन राज्यों ने मिलकर ई. स. १५८८-८९ और १५९४-९५ में दो बार विरोध का झण्डा खड़ा किया था, किन्तु अन्त में शाही फौजों ने उन्हें सदा के लिये दबा दिया। राय मुरारीदास का इन दिनों साथ होना सम्भव है। उसने जम्मू के राजा कपूरदेव के साथ हुए युद्ध का ओजपूर्ण वर्णन किया है।

कपूरदेव और मानसिंह :—

पंजाब के पर्वतीय राज्यों के इतिहास के अनुसार कपूरदेव की मृत्यु

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१५६० ई. के लगभग हो जाती है● । मानसिंह, उसके पिता भगवन्तदास और दादा भारमल का अकबर से मिलना जनवरी, १५६२ ई. स. में सांगानेर के स्थान पर होता है। अजमेर से ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती की जियारत से लौटते समय अकबर की उनसे सांभर में दुबारा भेंट हुई। उसके बाद ही इन लोगों का शाही सेवा में आना सिद्ध होता है। उत्तर दिग्विजयाथ प्रस्थान का समय ही प्रकाश में १५७६ ई. स. स्पष्ट है, जो कपूरदेव की मृत्यु के १६ वर्ष बाद आता है और उस समय उसके बेटे जगदेव और सामिलदेव में राज्य का बंटवारा होकर बाहु और जम्मू के दो पृथक् राज्य स्थापित हो गये थे। ऐसी परिस्थिति में कपूरदेव और मानसिंह का युद्ध सम्भव ही नहीं होता। यह प्रसंग 'मान-प्रकाश' में प्रत्यक्षदर्शी के जैसा वर्णन हुआ है। इसी प्रकार अन्य राज्यों के साथ हुए युद्धों के सम्बन्ध में भी शंका उठ सकती है। बलवों का प्रसंग लिया जाय, तो वे भी इतिहास संगत नहीं हैं क्योंकि मानसिंह उस समय १५८७ ई० से १६०३-४ तक बिहार और बंगाल में हो रहा था। कुछ ही समय के लिए विश्रामार्थ अजमेर आ गया था, किन्तु उसको तुरन्त ही फिर बंगाल लौट आना पड़ा।

तिथि क्रम का निर्णय :—

इसी प्रकार तिथि क्रम को देखने से कई विसंगतियां पाई जाती हैं। इससे यही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि कवि ने अपने आश्रयदाता के गौरवोत्कर्ष हेतु अतिशयोक्ति का प्रयोग किया है, जो कवि कर्म में प्राय: पाया ही जाता है। मुरारीदास भी इस सम्बन्ध में अपवाद नहीं है। काश्मीर विजय के लिये भगवन्तदास को भेजा था। उसने यूसुफ और उसके बेटे याकूब को बादशाह के पास बन्दी बनाकर भेजा था। याकूब भाग निकला था, किन्तु बाद में पकड़ा गया। दोनों बाप और बेटे फिर मानसिंह की निगरानी में बिहार भेज दिये गये थे। मान-प्रकाश में लिखा है कि काश्मीर के राजा ने आक्रमण के पूर्व ही भयभीत होकर अपने बेटे यूसुफ को राजा (मानसिंह) की सेवा में भेंट देकर भेजा। इस समय मानसिंह काबुल में था और उसके बाद बिहार बंगाल में गवर्नर के पद पर रहा।

पश्चिम दिग्विजय :—

काबुल का प्रसंग पांचवी किरण में आता है किन्तु इसके केवल चार ही श्लोक उपलब्ध हैं। वहां इतना ही उल्लेख मिलता है कि भगवन्तदास और यूसुफखाँ को सेना लेकर नीलाबक (अटक के पास) को जाने का आदेश देकर वह (मानसिंह) पश्चिम की ओर प्रस्थान कर गया। अन्तिम पत्र ६६ वाँ है।

●पंजाब के पर्वतीय राज्य, भाग २, पृष्ठ ५३५

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

इसके पूर्व पत्रांक ३४ से ६५ सभी अप्राप्य हैं जिनमें बहुत कुछ इतिहास समाविष्ट हुआ होगा। पश्चिम दिग्विजय तथा पूर्वी दिग्विजय का प्रारम्भिक प्रकरण अवश्य रहा होगा।

बंगाल विजय :—

बंगाल विजय का भी सांगोपांग वर्णन नहीं मिलता केवल एक ६६ वाँ पत्र ही प्राप्त है। उससे इतना ज्ञात होता है कि महासिंह, हिम्मतसिंह एवं उसका पुत्र कुशालसिंह और सुन्दरदास इधर विद्यमान थे। एगारसिंदूर (जिला मैमनसिंह), मघराज (अराकान), त्रिपुरा और कामरूप विजय का उल्लेख है। यह प्रसंग थोड़ा और अधूरा है। टिप्पणी में इनके सम्बन्ध में लिखा गया है।

भगवानदास और भगवन्तदास एक उलझन :—

मान-प्रकाश में पृथ्वीराज, भारमल, भगवन्तदास और मानसिंह का क्रमवार नाम आता है। इस रचना के उपलब्ध प्रकरणों में भगवानदास का कहीं भी उल्लेख नही है। पाश्चात्य लेखकों ने फारसी तवारीखों के आधार पर भगवानदास का नाम लिखा है। ओझाजी ने भी अपने एक लेख में "तवकाते अकबरी", "फरिश्ता", "अल बदायूनी" के आधार पर यह मत प्रकट किया है कि आम्बेर के राजा भारमल के पीछे उसका ज्येष्ठ पुत्र भगवानदास वहाँ का राजा हुआ और भगवानदास के कोई पुत्र न होने के कारण उसके छोटे भाई भगवन्तदास का छोटा पुत्र मानसिंह गोद लिया जाकर उसका (भगवानदास का) उत्तराधिकारी हुआ। भगवानदास और भगवन्तदास दोनों भाई थे*। किन्तु उलझन फिर भी कायम है। मान-प्रकाश में भगवानदास का कहीं भी उल्लेख नहीं है। भगवन्तदास का नाम अवश्य मिलता है—

१. समं स्व-सैन्यैर्भगवन्तदासः
मन्यांस्तथोग्रान् रजपूत-मुख्यान्। किरण ४, श्लोक १४।

तथा २. श्रीमानसिंहो भगवन्तदासः
स सैदखानो बलवानुदारः।
लाहौरदेशं समवाप्य ते वै
पंजाब देशान्तरसा प्रतस्थः (स्थुः) किरण ४, श्लोक १६।

तथा ३. भगवन्तदासेसफ सैदखांद्या
नित्याह भूमी-रमणो नृसिंहः।

---

*साहित्य संस्थान, उदयपुर, द्वारा प्रकाशित "ओझा निबन्ध संग्रह", भाग ३, पृष्ठ ४६।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पंजाब-देशस्य वृत्ति-भुग्भिः
सहैव नीलावपुरं व्रजध्वम् ।। किरण ५, श्लोक ३ ।

किन्तु भगवानदास का नाम नहीं है, जो अबुल फजल के "अकबर-नामा" को छोड़कर अन्य फारसी तवारीखों में कहीं नहीं है ।

ओझाजी द्वारा उठाई हुई उलझन अब निर्भ्रांत रूप से सुलझ जाती है कि राजा भारमल का बड़ा और उत्तराधिकारी पुत्र भगवन्तदास ही था न कि भगवानदास । मुसलमान लेखकों ने, जो यद्यपि समकालीन रहे थे तो भी लिपि-दोष, उच्चारण-दोष आदि के कारण, इन दोनों नामों के लिये पिछले इतिहासकारों में भ्रम उत्पन्न करा दिया । किन्तु "मान-प्रकाश" से, जो महाराजा मानसिंह के समकालीन ही नहीं अपितु उनके निजी मन्त्री एवं सेनानायक राय मुरारीदास की प्रमाणित विश्वसनीय रचना है, भगवन्तदास का स्पष्ट रूप से भारमल का ज्येष्ठ पुत्र और राजा होना सिद्ध है, तथा मानसिंह उसका ज्येष्ठ पुत्र और उत्तराधिकारी था, जैसा कि किरण २ में स्पष्ट है–

"यत्रा भवद्भूप-कुलावतंस–
पृथ्वीनृपो नाम गुण-प्रदीप्तः ।
तस्मादभूद् भारहमल्ल भूप–
स्सद्धर्मकर्मार्जितपुण्यपुञ्जः ।।५६।।

जज्ञेऽथ तस्माद् भगवन्तदासः
प्रचण्डदोर्द्दण्डजितारिसंघः ।
तस्मात्स जिष्णु कृतविष्णु-वाक्यो
जातो जयायास्य महीतलस्य ।।५७।।"

इन श्लोकों से यह स्पष्ट रूप से सिद्ध हो जाता है ।

मुंशी देवीप्रसाद ने भी अपने लेखों में इसी मत की पुष्टि की है, जैसाकि डॉ० मनोहरसिंह राणावत द्वारा विद्वत्तापूर्ण सम्पादित "सोलहवीं सदी में राजस्थान" अथवा मुंशी देवीप्रसाद कृत ऐतिहासिक चरित्र-माला में "आम्बेर के राजा" प्रकरण में स्पष्ट रूप से वर्णन किया गया है ।

इसके अतिरिक्त ओझा निबन्ध संग्रह के तृतीय भाग के "कछवाहों के इतिहास में एक उलझन" लेख के अन्त में सम्पादकीय टिप्पण में प्रिंस एल्बर्ट म्यूजियम, जयपुर में जमुहाय-रामगढ़ से आम्बेर के महाराजा मानसिंह के समय का वि. सं. १६६९ फाल्गुन सुदि ५, (रविवार, फरवरी १४, १६१३ ई. स.) का मिला हुआ एक प्रस्तर लेख सुरक्षित है, जिसके अनुसार भगवन्तदास ही आम्बेर का राजा था और उसका ही ज्येष्ठ पुत्र मानसिंह था ?

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

"स्वस्ति श्री श्रीमन्नृप विक्रमादित्य राज्यातीत सम्वत् १६६९ सा (शा) लिवाहनशकातीत १५३४ फाल्गुन शुक्लपक्षे ५ रविवासरे श्रीमन्जहांगीर साहिसलेम राज्ये वर्त्तमाने श्री रघुवंश तिलक कछवाह कुल मंडन श्री राजा पृथ्वीराज तत्पुत्र श्री राजा भारहमल्ल तत्पुत्र श्री राजा भगवन्तदास - तत्पुत्र सकल नरेन्द्र चूडामणि प्रताप पराभूत समस्त पृथ्वी विजय प्राप्त महायशो राशि विराजमान श्री महाराजाधिराज मानसिंह नरेन्द्रः●..............." आदि । इस प्रकार उहापोह करने तथा प्रमाणों द्वारा कछवाहों के इतिहास की भगवन्तदास और भगवानदास की उलझन तथा मानसिंह और माधवसिंह के छोटे बड़े होने के भ्रम का भलीभाँति निराकरण हो जाता है। ओझाजी के समय इन प्रमाणों की उपलब्धि नहीं थी। यदि उन्हें इनका पता होता तो यह ग्रंथि उसी समय सुलझ जाती।

मानसिंह और माधवसिंह :—

इसी प्रकार मानसिंह और माधवसिंह में कौन बड़ा था। ओझाजी के मतानुसार माधवसिंह बड़ा था✦। कारण माधवसिंह के आश्रित पण्डित पुण्डरीक विट्ठल कृत रागमंजरी में पहले माधवसिंह का नाम है—

'सिंहौ माधवमानपूर्वपदकौ संग्रामदक्षावुभौ।'

तथा 'जगति जयनशीलौ माधवमानसिंहौ।'

और दोनों को भगवानदास के पुत्र लिखा है●। किन्तु मान-प्रकाश से ध्वनित होता है कि वह मानसिंह का छोटा भाई हो—

"एवं रणे युध्यति मानसिंहे
समागते (तो) माधवसिंह वीरः।
विश्रम्यतां क्षोणिपते क्षणान्नः
तं दृश्यतां युद्धमिदं जगाद।।" किरण २, श्लोक ११७।

अर्थात् माधवसिंह ने मानसिंह को युद्ध से विश्राम लेने और मेरा युद्ध देखने के लिये निवेदन किया। "विश्रम्य तां क्षोणिपते क्षणान्नः" में माधवसिंह ने मानसिंह को 'क्षोणिपति' कहा है, इससे उसका राजा होना और ज्येष्ठ होना सिद्ध होता है। इससे उसके छोटे होने की सम्भावना प्रकट होती है। मुहणोत नैणसी

●"ओझा निबन्ध संग्रह", भाग ३, पृष्ठ ५०, टिप्पण।

✦उदयपुर का इतिहास, जिल्द १, पृष्ठ ४३०, टिप्पण २ तथा ओझा निबन्ध संग्रह, भाग ३, पृष्ठ ४५।

●ओझा निबन्ध संग्रह, भाग ३, पृष्ठ ४५ टिप्पणी २।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

की ख्यात में एक जगह भगवन्तदास के मानसिंह, माधवसिंह आदि नाम लिखे हैं●। इस क्रम को देखने से भी माधवसिंह छोटा प्रतीत होता है।

व्याकरण में सामासिक नियम से अल्प अक्षरों वाला शब्द, सौकर्य के लिये पहले रखा जाता है जैसा कि शिवकेशवौ, ग्रीष्मवसन्तौ आदि। इस नियम से पुण्डरीक विट्ठल ने अपने ग्रंथ राग-मंजरी में "माधव मानसिंहौ" तथा माधव मानपूर्व पद को लिखा है। बड़े का या प्रसिद्ध का नाम भी पहले आता है यथा—राम लक्ष्मणौ, भीमार्जुनौ आदि। जो भी हो किन्तु यह निश्चित है कि मानसिंह भगवन्तदास का ही ज्येष्ठ पुत्र था और आमेर की गद्दी पर बैठा था। यदि माधवसिंह बड़ा होता तो वही राजा हुआ होता। भगवानदास के गोद लिये जाकर मानसिंह का राजा होना अलग बात है। हिन्दू धर्म में दत्तक औरस पुत्र के समान ही और पूर्ण रूपेण अधिकारी माना जाता है। किन्तु इसका कोई पुष्ट प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

अन्य क्षत्रिय वंशों को अधीन करना :—

मान-प्रकाश में कई क्षत्रिय वंशों के नाम आये हैं जिनको मानसिंह ने वश में किये थे। अकबर की नीति और आकांक्षा भी यही थी कि मुगल साम्राज्य राजपूत वीर जाति की सहायता बिना स्थायी नहीं हो सकता। इसलिये उसने एक के बाद एक करके कई राज्यों को अपने साम्राज्य में मिला लिया उनमें कोटा-बूँदी के हाड़ा, जोधपुर, बीकानेर-किशनगढ़ के राठौड़, जैसलमेर के भाटी, आमेर के कछवाहा, मेवाड़ प्रदेश के शिशोदिया (महाराणा व उसके साथियों को छोड़कर), खीचीवाड़े के खीची, बुन्देलखण्ड के बुन्देले, बघेलखण्ड के बघेले, ग्वालियर के तोमर, सिरोही के देवड़ा (चौहान), मालव स्थित परमार आदि प्रमुख हैं। इस काम में मानसिंह, भगवन्तदास और भगवानदास का पूर्ण सहयोग रहा था। इसी से मुरारीदास ने लिखा कि—

'राजपुत्रान्वशीचक्रे समस्तानिह तान् श्रुणु।' किरण २, श्लोक ६१ अर्थात् उसने समस्त राजपुत्रों को वश में किया। अब यहाँ उनको सुनो जिनका वहाँ नामोल्लेख किया हैं। इस प्रकार मान-प्रकाश का ऐतिहासिक महत्त्व अंकित होता है। यदि यह अखण्ड रूप में पूर्ण ग्रंथ मिल जाता तो कई और अन्य बातों का खुलासा हो गया होता।

गुप्त सामग्री :—

ऐसे इतिहास के कई ग्रंथ सम्भव है छिपे पड़े हैं, कई दीमकों के

●ओझाजी निबन्ध संग्रह, भाग ३-४, पृष्ठ ४६, मुह० नै० ख्यात २, पृष्ठ १३, वंशावली में भगवानदास के मानसिंह बड़ा तथा माधवसिंह दूसरा दिया है।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

उदरदरी में पहुँच गये, कई सड़ और गल गये, कई अज्ञानतावश रद्दी में गये या टोकरियों (ढूमलियाँ कागज गलाकर बनाई जाती है) बनाने में नष्ट हो गये और कई विद्वेष की अग्नि को समर्पित होकर भस्म हो गये। किन्तु अब भी शोध करने पर कई ग्रंथ उपलब्ध हो सकते हैं।

"मान-प्रकाश" का साहित्यिक महत्त्व :—

साहित्य की दृष्टि से भी 'मान-प्रकाश' का महत्त्व कम नहीं है। काव्य के सभी लक्षण इसमें विद्यमान हैं। सर्ग के स्थान पर किरण का प्रयोग हुआ है, सो भी सहेतुक है, क्योंकि ग्रंथ का नाम प्रकाश है, जिसकी किरणें ही फैलती हैं। काव्य का चरित्र नायक सुप्रसिद्ध वीर पुरुष ही है। इसका प्रमुख रस वीर ही है, यद्यपि शृंगार, करूण, रौद्र, भयानक, अद्भुत, शांत, बीभत्स और हास्य रसों का भी यथा स्थान प्रयोग हुआ है। कुछ बानगी प्रस्तुत की जाती है-

"यतो यतो युध्यति दन्तिराजी।
ततस्ततो युध्यति मानसिंहः॥" आदि किरण २, श्लोक १३१।

ग्रंथ में सर्वत्र युद्ध का ही विशेष वर्णन है, अतः वीर रस का प्रचुर वर्णन हुआ है।

"संयुध्यतां तत्र महाभटाना-
मसृङ्नदी प्रादुरभूदुदारा।
परासुमातंग महाद्रिकूला
केशेन शैवालवती विरेजे॥" किरण २, श्लोक १३४।

इसमें बीभत्स रस का प्रयोग हुआ है।

शृंगार यथा —

"ते स्ववर्वाम विलोचना रतिरसोल्लासास्पदं शक्नुवः।"
किरण २, श्लोक १४०।

करूण—

"हित्वा तत्परिधानभूर्जवसनं जाता कुलीनापि सा।"
किरण २, श्लोक १४२।

इस प्रकार अन्य सभी रस काव्य में यत्र-तत्र दर्शनीय हैं।

अलंकारों का भी सहज प्रयोग हुआ है जिनमें उपमा, रूपक, अनुप्रास, श्लेष, उत्प्रेक्षा आदि कई प्रयुक्त हुए हैं। यथा—

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

"निशेव तद्वासरमास युद्धे
गतेऽस्त भावन्तदराति मित्रे ।
संकोचिते तत्तरुणी-मुखाब्जे
स माधवेन्दुस्सहसोद्दिदीपे ।।" किरण २, श्लोक १२० ।

में रूपक और श्लेष का प्रयोग दर्शनीय है ।

इसकी भाषा सरल एवं प्रसाद गुण से सम्पन्न है । युद्ध प्रसंग में ओज-पूर्ण भाषा का प्रयोग हुआ है । अनुष्टुप् (श्लोक), शार्दूलविक्रीड़ित, स्रग्धरा, मालिनी, इन्द्रवज्रा, उपजाति, वसंततिलका, भुजंगप्रयात आदि विभिन्न छन्दों के प्रयोग से काव्य में अधिक सरसता आ गई है । यह कवि मुरारीदास एक साथ कलम और तलवार दोनों का धनी था । लिपिकार के प्रमाद से कहीं शब्द-वर्ण अस्पष्ट हैं तथा कुछ त्रुटियां भी हैं, जिनसे कहीं कहीं अर्थ स्पष्ट नहीं हो पाया है । इतना होते हुए भी ग्रंथ की महत्ता में कोई कमी नहीं आ पाई है। इतिहास और साहित्य की निधि में यह अनमोल रत्न ही है ।

उपसंहार :—

श्रीमान् स्व. महाराज कुमार डॉ० रघुवीरसिंहजी हमारे साधुवाद के पात्र हैं, जिन्होंने 'मान-प्रकाश' जैसे दुर्लभ ग्रन्थ की माइक्रोफिल्म प्राप्त करवाकर बहुत ही प्रशंसनीय कार्य किया है । इसी प्रकार आपने अनेक दुर्लभ ग्रन्थों का अपने यहां संग्रह कर रखा है । आपका इतिहास-भण्डार अपूर्व है । आपके मार्ग-दर्शन में अनेक शोधकर्त्ताओं ने मौलिक कार्य किये हैं । डॉ० साहब ने 'मान-प्रकाश' के अनुवाद, सम्पादन आदि काकार्य मुझे सौंप कर मुझे साहित्य-सेवा का सुयोग प्राप्त कराया । यह कठिन कार्य कैसा हो पाया है यह तो सुविज्ञ जन ही निर्णय करेंगे, किन्तु इससे यदि इतिहास और साहित्य के क्षेत्र में कुछ भी अभिवृद्धि हुई और विद्वज्जनों का परितोष हुआ तो मैं अपने इस प्रयास को सफल समझूँगा । साथ ही यह भी निवेदन है कि यदि कोई उचित और सप्रमाण सुझाव होंगे तो उन्हें सहर्ष एवं साभार स्वीकार किया जाएगा ।

अन्त में मैं निदेकश राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर का भी अत्यन्त आभारी हूं, जिन्होंने इस ऐतिहासिक काव्य की उपयोगिता को समझ-कर अपनी ग्रन्थमाला में प्रकाशित करना स्वीकार किया ।

—किशनलाल दुबे
सीतामऊ (मालवा)

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मान-प्रकाश का सार

शौचाचार विचार :—

प्रथम तीन पृष्ठों में शौचाचार पर ही विचार प्राप्त होता है। मनुस्मृति, अंगिरा, देवल, पराशर आदि और भी ऋषियों के अनुसार जनन-शौच और मृत्यु-शौच पर प्रमाण रूप में कुछ श्लोक उद्धृत किये गये हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के लिये शौच की अवधि और शुद्धि का निर्णय किया गया है। पन्ने कटे हुए हैं, गलित हैं तथा किरण भी पूर्ण नहीं होने से विषय का पूरा ज्ञान नहीं हो सकता है।

दूसरी किरण कहाँ से प्रारम्भ होती है यह नहीं जाना जा सकता क्योंकि पृष्ठ १७ से वर्णन उपलब्ध होता है।

राज धर्म और राजा का स्वरुप :—

यहाँ पूर्व प्रसंग में राज धर्म का वर्णन है। कहा गया है कि देश में अराजकता नष्ट करके शांति स्थापनार्थ और प्रजा की सुख-समृद्धि के लिये राजा का होना अनिवार्य है। ईश्वर इसी निमित्त को लेकर राजा का निर्माण करता है। वह स्वयं राजा के स्वरुप में अपने अंश से आविर्भूत होता है। आगे चलकर इसी प्रसंग में वर्णन है कि राजा देव रूप होता है। अनेक देवताओं की शक्ति और अंशों का विग्रह है। मनुस्मृति, विष्णु आदि पुराण, महाभारत और गीता आदि से प्रमाण देकर यह सिद्ध किया है कि राजा विष्णु स्वरुप है, तथा अन्य सभी देवताओं की शक्तियों से सम्पन्न है और इसीलिए वह प्रजा पालन में, धर्म संस्थापन आदि में सर्वथा समर्थ है। अतः उसका सर्व भावेन सदा सर्वत्र आदर, मान होना चाहिये। बालक हो तो भी वह पूज्य है। उसकी सेवा की जानी चाहिये।

अकबर का देव रूप :—

इसी सिद्धान्तानुसार अकबर को सर्व समर्थ नृपति माना गया। जगदीश्वर से उपमित किया गया और इसीलिए उसकी सेवा करने से इहलौकिक सुख और ऐश्वर्य तो मिलेंगे ही, पार-लौकिक सुख भी मिलेगा, ऐसी धारणा व्यक्त की गई है। जो लोग ऐसा नहीं करते हैं वे मूर्ख है और दमन के योग्य हैं।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

भारमल, भगवन्तदास और मानसिंह से मेल और सम्मान :—

इस प्रकार वर्णन के बाद बादशाह के मन में यह धारणा निश्चित हुई कि सर्वविजयी होने के लिये उत्साही और जयेच्छु वीर का सहयोग अवश्य होना चाहिये। अपने स्वधर्मावलम्बियों पर भी पूरा विश्वास नहीं किया। यह सुयोग भी प्राप्त हो गया कि क्षत्रिय वीर आमेर के राजा भारमल से उसका मेल हुआ। बादशाह ने उसे बुलाया और उसका बड़ा सम्मान किया। उसके साथ उसके पुत्र भगवन्तदास और पौत्र मानसिंह को भी दरबार में बुलाकर उचित सम्मान किया। मानसिंह के रूप, शरीर गठन, बुद्धि की कुशाग्रता, बलवीर्य और पराक्रम, ओज तथा तेजस्विता आदि गुणों को देखकर उसने विश्वास पूर्वक निश्चय किया कि इसके द्वारा मेरी सर्व विजय की कामना पूर्ण हो सकती है अतः उसने उसको सम्मान पूर्वक बुलाया। वह भी अपने दल-बल के साथ उसकी सेवा में उपस्थित हो गया। बादशाह ने भेंट, उपहार आदि से दरबार में उसका बड़ा सम्मान किया और उस भरी सभा में उसने उसको अपने धर्म-पुत्र के रूप में स्वीकार किया। उसको अकबर ने यहां तक अधिकार देते हुए कहा कि विजय में प्राप्त हुई सारी सम्पत्ति पर तेरा ही अधिकार होगा। शाही खजाने में जमा कराने की आवश्यकता नहीं।

इसके पश्चात् फिर अपनी विशाल सेना उसके अधीन करके विजयार्थ आदेश दिया। पत्रांक २२ से यह वर्णन प्रस्तुत होता है।

मानसिंह की विजय यात्रा :—

मथुरा से प्रस्थान करके द्वारका की ओर जाकर कई राजाओं को उसने जीत लिए। वृन्दावन आदि स्थानों में देवालयों की पुनः स्थापना की।

विभिन्न क्षत्रिय वंशों को वश में करना :—

यात्रा के पूर्व उसने कई राजपूत वंशों को वश में कर लिया था, वे कछवाहा, राठौड़, भाटी, हाड़ा, निर्वाण चौहान, खीची, सिसोदिया, परमार, सोलंकी, बघेल, चन्देल, गौड़, यादव और वैस वंशी आदि कई थे। इस विजय यात्रा में चित्तौड़, कुम्भलमेर, रणथम्भोर के किले भी जीतने के लिये वह उद्यत हुआ।

महाराणा से युद्ध होने के पूर्व कई अन्य राजा भी जीते गये। यहाँ उन जीते गये राजा, उनके देश और राजघराने के लोगों की विपन्नावस्था का वर्णन और मानसिंह की गौरवपूर्ण प्रशंसा है।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

महाराणा से युद्ध :—

इसके पश्चात् उसने महाराणा प्रताप को ललकारा। पहले तो महाराणा ने इसकी अवहेलना की किन्तु जब बार-बार उसे ललकारा तो वह वीर भी डण्डे से पिटे हुए कुपित सर्प के समान मैदान में आ डटा। यहाँ वीरतापूर्ण वाणी रूप में और रण-भूमि में प्रत्यक्ष रूप में युद्ध प्रारम्भ हुआ। दोनों ओर से भीषण प्रहार हुए, अस्त्र-शस्त्रों के प्रयोग हुए। दोनों ओर के वीर हताहत हुए। यहाँ तक की वहाँ रक्त की भयानक नदी प्रवाहित हो गई, जिसका कवि ने वीरतापूर्ण और काव्य कला पूर्ण वर्णन किया है। राणा की सेना नें पहले बादशाह की सेना को खदेड़ दिया था, किन्तु अन्त में विजयश्री मानसिंह के ही हाथ लगी।

माधवसिंह का युद्ध में आना, राणा की पराजय :—

जब मानसिंह युद्ध कर रहा था तभी उसका छोटा भाई माधवसिंह आ गया और उसने मानसिंह को विश्राम करने का कह कर राणा के साथ घोर युद्ध किया। महाराणा भी उन दोनों वीरों के साथ अदम्य उत्साह से युद्ध करने लगा। माधवसिंह ने राणा की सेना को ज़ब दबाया तो राणा स्वयं आगे बढ़ा और बड़े वेग से शत्रु दल को काटने लगा। हाथी, घोड़े और सैनिक आदि सब काटे जाने लगे। इससे मानसिंह का मार्ग अवरुद्ध सा प्रतीत होने लगा। यह देखकर उसने फिर बड़े उत्साह से राणा पर आक्रमण किया। इस बार राणा की सेना हतोत्साहित हो गई और मैदान छोड़कर भागने लगी। यद्यपि राणा बिजली के समान तरलता से युद्ध करता था तो भी उसके साथी वीर पर्वत कंदराओं और वन की ओर भाग गये। राणा अपनी अपार सम्पत्ति, पुत्र और स्वजनों को लेकर स्वराज्य और स्वदेश को छोड़कर कहीं अन्यत्र चला गया और उधर मानसिंह विजयोन्माद से हर्षित हो बादशाह की सेवा में उपस्थित हो गया।

मानसिंह की अन्य विजय :—

राणा को जीतने के पश्चात् मानसिंह ने गुर्जरों, मालवीयों, वैदर्भियों, द्रविड़ों, मलयवासियों और द्वारका वासी राजाओं को जीता और उन सबसे अकबर की अधीनता स्वीकार करवाई।

समुद्र-विजय की योजना :—

बेदर का राजा, सौराष्ट्री, तैलंगी, चोल आदि के राजा भी उसके आतंक से प्रभावित और भयभीत हुए। मानसिंह ने समुद्र विजय की भी तैयारी की थी, किन्तु समुद्र से वार्तालाप का रूपक खड़ा करके मानसिंह को

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अपनी अब तक की विजय और प्राप्त भूमि ऐश्वर्यादि को ही सुरक्षित रखने की प्रेरणा देकर विमुख कर दिया और वह बादशाह की सेवा में उपस्थित हो गया। बादशाह इस विजय से बहुत प्रसन्न हुआ। उत्साहित होकर उसने मानसिंह का बड़ा सम्मान किया और उसे उत्तर दिशा की विजय के लिये आदेश दिया।

यहीं दूसरी किरण समाप्त होती है।

विजयोपहार और ऐश्वर्य :—

तीसरी किरण में उसकी विजय के उपलक्ष्य में राजाओं से प्राप्त उपहार, भेंट और ऐश्वर्यादि का वर्णन है। अपार धन, रत्नादि प्राप्त किये। कहीं से कन्याएँ, कहीं से धन-सम्पत्ति, रत्न, मोती और हीरों के हार तथा जहाँ-जहाँ, जो-जो उत्तम, सुन्दर और बहुमूल्य वस्तुएँ भी वे सब उसे भेंट में प्राप्त हुईं। समुद्र भी प्रसन्न हुआ और रत्नादि-रूप में लक्ष्मी देकर अपने आपको धन्य किया। यह किरण अपूर्ण है। पत्रांक २९ अप्राप्त है, पत्रांक ३० से चतुर्थ किरण का प्रसंग है वहाँ भी पूर्व के ९ श्लोक नहीं हैं, १० वें का उत्तरार्द्ध ही है।

उत्तर दिग्विजय समय निरूपण :—

इस किरण में उत्तर-दिग्विजय का वर्णन किया गया है। इसी में समय का संकेत मिलता है। बादशाह ने मानसिंह को रसाष्टरन्ध्र (अर्थात् ९८६), नामक सन् (हिजरी) में उत्तर दिग्विजय के लिये आदेश दिया (१५७८ ई०)।

लाहौर और पंजाब विजय :—

बादशाह ने भगवन्तदास, अन्य वीरों, सैदखाँ, मिर्जा ईसफखाँ तथा मुबारकखाँ को युद्ध के लिये आज्ञा दी और इन्हें मानसिंह की अधीनता में भेजा। मानसिंह ने आदेशानुसार सिंधु नदी के तट के प्रति प्रस्थान किया। उसने, भगवन्तदास और सैदखाँ ने लाहौर को जीता और फिर आगे बढ़े। स्यालकोट को अधीन करके मिर्जा ईसफखाँ को रोहित नाम के पहाड़ी किले पर नियुक्त किया और उससे कहा कि मैं उत्तर दिशा को जीतकर आऊँ तब तक तुम यहीं बने रहना।

मुरारिदास से भेंट और उसका परिचय :—

इसी समय मानसिंह की राय मुरारिदास से भेंट हुई। यहाँ मुरारिदास के वंश का संक्षिप्त परिचय दिया है। वह वडहरा खत्री (क्षत्र) कुल में उत्पन्न

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

हुआ था। उसके पिता का नाम परशुराम था। उसके दो भाई और थे–शंकरदास और तीसरा सुन्दर (दास)। मुरारिदास सब में बड़ा था। वह बड़ा चतुर, वीर, वाक्पटु, नीति कुशल, विनयी, धर्म-प्रेमी, विद्वान्, ब्राह्मण भक्त और शिव-विष्णु का परम सेवक था। मानसिंह उसे पाकर बहुत प्रसन्न एवं उत्साहित हुआ। तीनों भाई गुणवान् थे किन्तु मुरारिदास में इनसे विशेष योग्यता थी।

कपूरदेव के साथ युद्ध :—

मानसिंह ने मुरारिदास को अपना मन्त्री बनाया और फिर युद्ध के लिये प्रयाण किया। इस यात्रा में सबसे पहले जम्बुगिरि के राजा कपूरदेव से युद्ध हुआ। यह मल्हास वंशी और मालदेव के कुल का था। दोनों में भयंकर युद्ध हुआ। आरम्भ में कपूरदेव के वीर योद्धा मानसिंह की सेना का नाश करने लगे। यह देख मानसिंह ने अपने वीरों को प्रोत्साहित कर युद्ध का आदेश दिया। घमासान युद्ध हुआ, दोनों वीर भी रण-वाद्य बजाते हुए आगे बढ़े और आमने-सामने हुए। भेरी, शंख, नगाड़े और वीरों के जय घोष से गगन-मण्डल गूँज उठा। युद्ध में तेजी आई, दोनों ओर के वीर कट-कट कर गिरने लगे। यही स्थिति हाथी-घोड़ों की भी हो गई। रक्त-सरिता प्रवाहित हो गई। परिणाम में मानसिंह ही विजयी हुआ। कपूरदेव और उसका पुत्र जीत लिये गये। उसका गढ़ छीन लिया गया।

इसके पश्चात् मानसिंह ने त्रिकूट पर्वत को पार करके लालदेव राजा को जीता।

मानसिंह ने उदाराशयता से कपूरदेव के दो पुत्रों और दो पुत्रियों का धर्मानुकूल विवाह सम्पन्न कराया और उसका राज्य उसे लौटा दिया। बद्रीनाथ की सीमा तक का देश उसने अपने अधीन कर लिया। इसी समय उसने नगरकोट (कांगड़ा) के राजा जयचन्द को भी जीता। उसके भी पुत्र और पुत्री का विवाह सम्बन्ध सम्पन्न करा दिया।

अन्य कई राज्यों को अधीन करना :—

इसके पश्चात् मानसिंह ने चम्पा के राजा, भड्डू के राजा, ग्वालियर (गुलेर) के राजा, दाढौआल के राजा तथा नववर पैठान के राजा को जीता। इसी सिलसिले में उसने शाम्बा के राजा, जसरोट के पहले राजा, उसी तरह मानसुकोट के राजा, वाह (वाहेन्द्र) के राजा, हैताल के राजा और जैराल के राजा को अपने अधीन कर लिया। इन्हें अकबर की सेवा में लाकर इनके राज्य इन्हें पुनः ससम्मान लौटा दिये।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मानसिंह की धर्म भावना :—

इसके पश्चात् मानसिंह की भक्ति और धर्म कार्यों का उल्लेख है। देव नदी गंगा के किनारे बसे हुए देव स्थानों को उदारता पूर्वक प्रचुर दान दिया। भगवान शंकर का भी वह उपासक हो गया। उसके बल और आतंक से भागे हुए राजा भी उससे आ मिले और उन्होंने बादशाह की अधीनता स्वीकार कर ली।

काश्मीर विजय :—

इसके बाद वह काश्मीर विजयार्थ आगे बढ़ा। राजौर प्रान्त तक वह बढ़ता हुआ चला गया। काश्मीर के राजा ने जब यह सुना तो वह घबरा गया और भयभीत होकर कि कहीं मेरी राजधानी नष्ट न कर दें, लूट न ले, उसने अपने एकलौते पुत्र ईसफखाँन को मानसिंह के पास भेजा। इस प्रकार सारा काश्मीर भी जीत कर बादशाह के अधीन कर दिया गया और फिर वह बादशाह की सेवा में लौट आया।

यहीं चतुर्थ किरण समाप्त होती है।

पश्चिम विजय :—

पंचम किरण के केवल चार-चार श्लोक उपलब्ध हैं। इस किरण में बादशाह ने मानसिंह को पश्चिम दिशा को जीतने के लिये आज्ञा दी। मानसिंह स्यालकोट पहुँचा। वहाँ से सिंधु नदी की ओर बढ़ते हुए उसने सैनिकों को नीलावक नामक स्थान को जाने के लिये कहा। सेना के प्रमुख व्यक्ति भगवन्तदास, ईसफखाँ और सैदखाँ को पंजाब के जागीरदारों को साथ लेकर नीलावकपुर को जाने के लिये आदेश दिया।

यहाँ ३३ वां पत्र समाप्त होता है, किन्तु किरण समाप्त नहीं हुई। अतः प्रकरण का पूरा विवरण अनुपलब्ध है।

पूर्व दिशा की विजय :—

अन्तिम पत्र ६६ वां हैं। इसमें कौनसी किरण है इसका पता नहीं चलता। इसमें सुदूर पूर्व दिशा के देशों को विजय करने का संकेत मिलता है। महासिंह का यहां नाम आता है और उसकी वीरता का परिचय मिलता है। उसने पूर्व दिग्विजय में बड़ा सहयोग दिया। उसमानखाँ त्रिपुरा, कामरूप आदि की सेना की सहायता से मघ देश के लिये नियुक्त किया गया था। उधर एगारसिंदूर के समीप महासिंह डटा हुआ था। हेमन्तसिंह का पुत्र कुशालसिंह राजाज्ञा से दक्षिण की ओर था।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

सुन्दरदास और मघ राज्य :—

यहां मुरारिदास का छोटा भाई राय सुन्दर (दास) मघ देश की सेना को मंथन करने के लिये मंदराचल के समान उद्यत था। तुमुल युद्ध हुआ। मानसिंह ने इस युद्ध को वन्दर किले पर खड़े होकर बड़े कौतूहल से देखा था।

एगारसिंदूर के राजा को जीतने के लिये युद्ध :—

एगारसिंदूर तक ६० कोस के क्षेत्र का राजा स्वयं उसका मण्डन (भूषण) था। वह भी मानसिंह को जीतने की उत्सुकता से युद्धार्थ रण-भूमि में आ खड़ा हुआ, दोनों ओर से घनघोर युद्ध हुआ। एक दूसरे को तिरस्कृत करने लगे। परस्पर विजयी होने की तीव्र आकांक्षा से वे खूब लड़े।

आगे पत्र उपलब्ध नहीं है। इस प्रकार यद्यपि यह ग्रन्थ (मान-प्रकाश) अपूर्ण और खण्डित रूप में प्राप्त है तो भी इतना अंश भी इतिहास की दृष्टि से वहुत महत्वपूर्ण है। जितना अंश उपलब्ध है, उससे वहुत कुछ उपयोगी सामग्री मिलती है और महाराजा मानसिंह की उज्जवल कीर्त्ति का अच्छा परिचय प्राप्त होता है।

इति शं भवतु।

उपसंहार :—

यह ग्रन्थ खण्डित रूप में उपलब्ध हुआ है, इसलिये कई स्थलों के प्रसंगों का संदर्भ भी उपलब्ध नहीं होने से प्रकरण का खुलासा नहीं हो सकता। इसके अतिरिक्त लिपिकार के प्रमाद से कई वर्ण स्पष्ट नहीं होने से शब्दों के स्वरुप, अर्थ और भाव व्यक्त नहीं किये जा सके। कई जगह श्लोकों के अर्थ नहीं लग पाये या दुविधा वनी रही। लिपिकार की असावधानी से व्याकरण सम्बन्धी तथा लिपि सम्बन्धी त्रुटियाँ भी यत्र-तत्र भरी पड़ी है, छंदो भंग भी हुआ है। इन सभी कारणों से अर्थ और भाव प्रकाशन में त्रुटियों का रहना सम्भव है और इसीलिए कई व्यक्तियों, स्थलों तथा राज्यों के नामों का भी निश्चय नहीं हो पाता। पुरुषों के सम्बन्ध में तो सन्देह कम है किन्तु स्थानों के नाम निर्धारण में अवश्य सन्देह बना रहता है। इतना होते हुए भी ग्रन्थ की ऐतिहासिक महत्ता में कोई कमी नहीं आती। यदि भविष्य में पूर्ण ग्रन्थ की उपलब्धि हो तो इतिहास क्षेत्र में कई नई उपलब्धियाँ प्राप्त हो सकेगी।

किशनलाल दुबे

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

॥ श्रीः ॥

प्रस्तावना

भारत के मुग़ल सम्राट् अकबर कालीन इतिहास में आम्बेर के राजा भारमल्ल, तत्पुत्र भगवन्तदास और उसके ज्येष्ठ पुत्र मानसिंह के वृत्तान्त बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। इन लोगों ने समझ लिया था कि यद्यपि मुग़ल बाहर से आये हुए थे परन्तु उनकी शक्ति और नीति इतनी प्रबल हो गई थी कि एतद्देशीय विश्रृंखल राज्यों को संगठित करके उनका प्रतिरोध करना कठिन ही नहीं असम्भव सा हो गया था। चुपचाप बैठकर दर्शक बने रहना भी न क्षत्रिय का धर्म था और न इससे आत्मरक्षा ही हो सकती थी। अतः दूर की, पास की सभी बातों पर अच्छी तरह सोच विचार करके आम्बेर के कछवाहा राजाओं ने मुग़ल बादशाहों से मेलजोल स्थापित करने का निर्णय किया। उधर बुद्धिमान अकबर बादशाह भी अपनी सल्तनत की पाएदारी के लिए यहाँ के राजाओं की सहायता और मित्रता को आवश्यक मानने लगा था। उसने कट्टरता को दूर रखकर भारतीय रजवाड़ों से मेल मिलाप का सम्बन्ध स्थापित करके यह दर्शाना आरम्भ कर दिया जैसे वह इसी देश की मिट्टी पानी का बना हुआ था और इस देश की उन्नति एवं समृद्धि ही उसका लक्ष्य और उद्देश्य था। उसकी इस इच्छा की पूर्ति में सहायक बना आमेर का मानसिंह, जिसने निष्ठा के साथ देश को बादशाही झण्डे के तले लाकर एक डोर में बाँधे रखने का प्रयत्न किया और साथ ही अपने धर्म और धन की भी रक्षा करता रहा। सारांश यह है कि साम्राज्य का वर्चस्व बढ़ाने के लिए उसने जो सैनिक अभियान किए और स्वधर्म रक्षा के लिए लुप्त हुए देवालयों आदि का पुनरुद्धार किया, कराया, उनके वृत्तान्तों के बिना अकबर का इतिहास कुछ भी नहीं है।

मानसिंह बचपन से ही अपनी विलक्षण बुद्धि का परिचय देने लगा था। देखने में तो वह विशेष आकर्षक नहीं था परन्तु बलिष्ठ अवश्य था। अकबर की पारखी आँखों ने उसको देखते ही पहचान लिया और वह उसको अपने पास रखने लगा। वह मानसिंह की सूझबूझ, निर्भीकता और साहस से इतना प्रभावित हुआ कि उसको 'फर्ज़न्दे दौलत' अर्थात् 'वैभव का पुत्र' कहने लगा। आगे चलकर उसने अपने आपको इस उपाधि के लिए उपयुक्त भी सिद्ध किया। स्वाभाविक है कि ऐसे असाधारण व्यक्ति के विषय में कवि लोग

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

काव्य लिखते, चारण और भाट गीत रचना करते और इतिहास लेखक अपने ऐतिहासिक विवरणों में उसके चर्चे करते। समकालीन इतिहासों में राजा मानसिंह के साहसिक कार्यों और विजयाभियानों की कथाएं सविस्तार वर्णित हैं। काव्य के रूप में, जहाँ तक हमें ज्ञात है, केवल तीन ही समकालीन रचनाएं प्राप्त हैं। दो भाषा में और एक संस्कृत में। भाषा के दोनों काव्य भी 'मानचरित्र' और 'मानचरित्र रासो' नाम से मानसिंह के जीवनकाल में ही रचे गये और सम्भवतः उसको सुनाए भी गये हों। संस्कृत में प्रस्तुत 'मान-प्रकाश' की रचना तो उसके मन्त्री और सहायक मुरारिदास ने ही की है।

तीनों काव्यों के कर्त्ता विभिन्न तीन श्रेणियों के हैं। 'मानचरित' का रचयिता अमृतराइ या अमृतराज भाट था जिसने अपने काव्य में वंश-वर्णन को प्रधानता दी है। इतिहास और काव्य उसके सहायक हैं। इतिहास की जो घटनाएँ इसमें वर्णित हैं वे मान्यताओं से विरुद्ध नहीं हैं। युद्ध प्रसंगों में सेना-प्रयाण और रणभूमि में मारामारी के वर्णन अवश्य ही कवि परम्परानुकूल हैं। प्रकृति और शृंगार वर्णन में अपने शास्त्रज्ञान और कल्पना शक्ति का परिचय भी कवि ने दिया है।

'मानचरित्र रासो' का कर्त्ता रामपुरा (मेवाड़) का निवासी नरोत्तम कवि ब्राह्मण था जो अपना आर्थिक संकट मिटाने के लिए मानसिंह के पास याचना करने आया था। यह कवि अपेक्षाकृत प्रौढ़ और विज्ञ प्रतीत होता है। सजीव वर्णन और भाषा एवं चमत्कारपूर्ण कल्पनाओं में इसका वैशिष्ट्य स्पष्ट परिलक्षित है। शास्त्रज्ञान और व्यापक अध्ययन की छाप भी अपना प्रभाव दिखाने में पीछे नहीं है। इतिहास और भौगोलिक स्थानों के वर्णन प्रायः सम्मत हैं।

तीसरा प्रस्तुत 'मान-प्रकाश' काव्य मुरारिदास वड़हरा खत्री द्वारा प्रणीत है और संस्कृत में है। यह खण्डित है और इसके कुछ ही पत्र कलकत्ता की एशियाटिक सोसाइटी में संख्या जि० ८२५९ पर सुरक्षित हैं। उदयपुर से प्रकाशित 'शोध-पत्रिका' की जिल्द १८ के अंक १, १९६७ ई० में डॉ. प्रभाकर शास्त्री ने (जो अब रा. वि. में हैं) इस पर एक लेख लिखा था। अब सोसाइटी से ही उक्त पत्रों की फोटो कापियाँ प्राप्त करक इतिहास के सुप्रसिद्ध विद्वान् रघुवीरसिंह जी सीतामऊ ने अपने निर्देशन में पण्डित कृष्णलालजी दुबे से इसका सम्पादन करवाया है जो सम्प्रति इस रा.प्रा.वि.प्र. से प्रकाशित होने जा रहा है।

मान-प्रकाश, पूर्व दोनों रचनाओं की तरह प्रशस्तिपरक ही नहीं, एक 'स्वान्तः सुखाय' रचना लगती है। अपने आश्रयदाता की किञ्चित् विशिष्टता और प्रशस्ति का आ जाना स्वाभाविक ही है परन्तु उद्देश्य यही रहा हो, ऐसा

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

नहीं लगता। आरम्भ में जहाँ अशौच निर्णय और राजा के लक्षण आदि लिखे हैं, उनसे तो ऐसा प्रतीत होता है कि यह किसी धर्म-शास्त्रीय ग्रंथ का उपक्रम है। तदनन्तर तत्कालीन विभूतिमत् पुरुषों, अकबर और मानसिंह में देवत्व का दर्शन पौराणिक पद्धति पर आश्रित है। इससे कवि के विशिष्ट अध्ययन का भी परिचय मिलता है। कुछ विशेष सूचनाएं भी इस कृति से प्राप्त होती हैं जो सामान्यत: अन्यत्र वर्णित नहीं हैं। यथा- जब अकबर ने यह सोचकर कि यह वीर मानसिंह मथुरा से विजय यात्रा आरम्भ करके द्वारका-पर्यन्त सहज ही में विजय प्राप्त कर सकता है तो उसने दिग्विजय के लिए आज्ञा प्रदान की। तब उस मानसिंह ने यह निश्चय किया कि सबसे पहले देवसमूह से वंदित श्रीगोविन्द राय के मन्दिर की वृन्दावन में सम्मानपूर्वक पुन: प्रतिष्ठा कराऊँगा जिससे भगवान् का अवतारोत्सव वहाँ धूमधाम से होता रहे। यही नहीं, उसने मन्दिर बनवा कर वहाँ के नगरनिवासियों एवं ब्राह्मणों को कर मुक्त कर दिया। फिर, उसने द्वारका विजय के लिए प्रस्थान किया। इससे मानसिंह की श्री कृष्ण-भक्ति और हिन्दू-निष्ठा का प्रमाण मिलता है। प्राय: इस राजा और इसके कुल की धार्मिक आस्था के विषय में अनेक प्रकार के अनुमान लगाये जाते हैं, कोई उसके शाक्त अथवा शैव होने का अनुमान लगाते हैं, कोई उसे धर्मनिरपेक्ष और केवल साम्राज्य-सेवक होने की कल्पना करते हैं, परन्तु मुरारिदास स्पष्ट कहता है, कछवाहाकुल वैष्णव धर्म और श्रीकृष्ण का उपासक था— 'जाते जगत्यां कछवाहवंशे राधाधवाराधन पूतपाणौ।'
(मा. प्र. १, ५८) इसी प्रकार मुरारिदास ने अपने स्वामी की प्रसन्नता के लिए किसी ऐतिहासिक तथ्य को छुपाने का भी प्रयास नहीं किया है। आमेर राज्य के इतिहास लेखक और रचनाकर प्राय: इस घटना का वर्णन नहीं करते कि राजा भारमल ने अकबर से (वैवाहिक) सम्बन्ध करके उसका आश्रय प्राप्त किया था परन्तु मुरारिदास ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि वह सूर्यवंशी राजा उस (अकबर) को कृष्ण वाक्यानुसार विभूतिमत् सत्त्व-रूप में कृष्ण ही जान कर अपने जाति जनों सहित उसके पास उपस्थित हुआ और उससे सम्बन्ध भी स्थापित किया—

यावद्भिस्तद्गुणैस्सोऽयं युक्तो जगति दृश्यते।
'यद्यद्विभूतिमद्ऐतद्' वाक्यात् कृष्णो भुवि॥ मा. प्र. १, ६८

स सूर्यवंशोद्भव भूपतेजाः
समं स्वसैन्यैस्समुपाजगाम।
सम्मानयित्वा तमनेन साकं
सम्बन्धमप्येष तदा चकार॥ मा. प्र. १, ७१

महाराणा प्रताप के साथ मानसिंह के नेतृत्त्व में युद्ध तत्कालीन

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

इतिहास का बहुचर्चित विषय है। इसके कारणों पर भी अनेक प्रकार की कथाएँ कही जाती हैं। भोजन विषयक एक कहानी बहुत दोहराई जाती है कि मानसिंह के सम्मान में दिए हुए भोज में महाराणा ने उनके साथ बैठकर भोजन करने में आपत्ति की और इससे मानसिंह रुष्ट हो गया। आपस में कितने ही व्यंग्य वाक्य भी कहे गये और इसी कारण लड़ाई हुई। परन्तु मुरारिदास और अन्य दोनों भाषा कवि इस विषय में कुछ नहीं कहते। ये तीनों ही सम सामयिक हैं और ऐसी कोई बात होती तो उसका उल्लेख अवश्य करते। मुरारिदास जहाँ सम्बन्ध स्थापन जैसे अपकीर्त्तिकर माने गये प्रसंग की भी चर्चा किये बिना नहीं रहा वहाँ इस प्रसिद्ध युद्ध-घटना के कारण का अवश्य उल्लेख करता। वह तो केवल इतना ही कहता है कि मानसिंह बादशाह के लिए सम्पूर्ण देशों पर विजय प्राप्त करने के उत्साह में भरकर राणा के अभिमुख हुआ और उसको युद्ध के लिए ललकारा—

अथाजगामाभिमुखस्तुवद्भि–
 र्जनैर्वृतो धर्मधुरीणमुख्यः।
तमाह्वयामास महोग्रवीर्यं
 राणा नृपम्मानमहीमहेन्द्रः ॥१०५॥ मा. प्र. १।

उधर नरोत्तम कवि ने कहा है कि राणा प्रताप को गद्दी पर बैठे जब सात वर्ष हो गये और कोई युद्ध नहीं हुआ तो उसकी रणकण्डू तीव्र हो गई। उसने जालौर पर चढ़ाई करके कर वसूल किया और वहाँ के निवासियों को तंग भी किया। इस पर उन लोगों ने अकबर के दरबार में जाकर फरियाद की और तभी बादशाह ने राणा का दमन करने को सेना भेजी जिसका प्रधान मानसिंह था। इससे यही लगता है भोजन-दुखान्तिका कल्पित ही है जिसको उभय-पक्षीय लेखकों ने गढ़ कर इस वृत्तान्त में जोड़ लिया है, ऐसा भी कतिपय इतिहास-वेत्ताओं का अभिमत है।

राणा और मानसिंह के युद्ध का मुरारिदास ने सविस्तार वर्णन किया है जो पारम्परिक तो है परन्तु इसमें उभय पक्ष के वीरों की वीरता और शौर्य की निष्पक्ष होकर प्रशंसा की गई है। यद्यपि कवि मानसिंह का निकट सहयोगी मन्त्री था परन्तु उसने राणा की वीरता, रण-कुशलता और निर्भीकता की खुलकर प्रशंसा की है। इस वर्णन में उसने अपने कवित्व का भी सुन्दर प्रदर्शन किया है। परिणाम जो कुछ हुआ वह सर्व विदित है। मुरारिदास ने इस वर्णन का उपसंहार यही कहकर कर दिया है—

'नैवं कर्म सुदुष्करं सुकृतवान् जित्वा परान् वैरिणः।' मा.प्र. १, १४९

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

इसके अनन्तर मानसिंह द्वारा गुर्जर, मालव, विदर्भ, द्रविड और मलय देशों पर विजय का वर्णन आता है, जिनमें से अनेक को अकबर की अधीनता स्वीकार कर लेने पर उन्हीं के देशों में स्थापित कर दिया गया। समुद्रतटवर्ती सौराष्ट्र, तैलंग, बीदर और चोल आदि राज्यों के अधिपति भी उससे भयभीत हो गये। उसने समुद्र-विजय का भी विचार किया परन्तु कवि ने चतुराई से रत्नाकर द्वारा विनय वचन सुनवाकर उसके इस मन्तव्य को स्थगित करवा दिया—

'एवं सिन्धुवचो निशम्य नृपतिस्तत्याज तल्लज्जितः।' मा. प्र. १, ४
अमृतराइ और नरोत्तम कवि ने मानसिंह के सागर-विजय अभियान को यह युक्ति देकर रुकवाया है कि उसके सेनानायकों और मन्त्रियों ने कहा, 'हे राजन्! तुम्हारे पूर्वज श्रीराम ने लंका को जीतकर विप्र विभीषण को दान में दे दी थी, अब उस पर मन चलाना उचित नहीं है।'

मानसिंह बादशाह के पास आकर उपस्थित हो गया जहाँ उसको उत्तर दिशा में विजय प्राप्त करने का आदेश मिला। उत्तर के लिए प्रस्थान करने से पूर्व लूट और भेंट में प्राप्त वस्तुओं तथा राजकन्याओं का वर्णन संस्कृति परक है। उन दिनों उपहार में विजयी राजा द्वारा पराजित से कन्या ग्रहण करना एक सामान्य रिवाज़ था। इसके द्वारा वे लोग मैत्री के बन्धन को सुदृढ़ करना मानते थे।

उत्तर विजय के प्रसंग में (किरण ४) हिन्दू एवं मुसलमान योद्धाओं, राजाओं, आयुधों और उत्तर दिशा के देशों, पर्वतों तथा नदियों आदि के नाम इतिहास, भूगोल और संस्कृति के अध्ययनार्थ महत्त्वपूर्ण हैं। इसी तरह पश्चिम और पूर्व दिशाओं पर अभियानों के प्रसंग भी चमत्कारपूर्ण और सूचना-गर्भित हैं। इन स्थलों और विशिष्ट व्यक्तियों के नामों का स्पष्टीकरण अनुक्रमणिका (भा. १-२) में किया गया है, जो अध्ययनीय है।

इस प्रकार राय मुरारिदास की यह कृति राजा मानसिंह के अभियानों का एक आँखों देखा वृत्तान्त है जो तत्कालीन राजनीति, इतिहास, भूगोल और सांस्कृतिक मान्यताओं की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है। सम्भव है, भारतीय इतिहास के पुनर्लेखकों को भी इसमें बहुत सी उपयोगी सामग्री मिले, साथ ही, साहित्य-रसिकों के लिए भी इसमें बहुत कुछ है।

इतिहास के प्रकाण्ड पण्डित डॉक्टर रघुबीरसिंहजी सीतामऊ ने इसमें आवश्यक उपयोगी सूचनाएँ सन्दर्भित कराकर इसके सम्पादक श्री कृष्णलालजी

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

दुबे के कार्य को परमोपयोगी बना दिया है। राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर अपनी परम्परानुसार साहित्य और इतिहास के ढके छिपे रत्नों को प्रकाश में लाकर देश के अध्येता-अन्वेषकों को ऐसी मूल्यवान सामग्री उपलब्ध कराने में लगा हुआ है, इससे हमें सन्तोष है।

गोपालनारायण बहुरा
८-५-८६

बहुराजी का बाग,
टोंक फाटक,
जयपुर-३०२०१५

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

प्रथमः किरणः

पत्रांक १. ………… [1]पुण्डरीकाक्षं सर्वधर्मैकसाक्षिणं ।
मन्वादिशास्त्रमालोच्य शुद्धिरत्र निरू………[2] ।।१।।

……नि

नानास्मृतिप्रोक्तमतानि शुद्ध्यै
महत्तकः श्रीलमुरारिदासः ।
स्वल्पप्रया-[3] र्मादि विचारणीया
शुद्धिः प्रसिद्धा यदि सास्ति सिद्धिः ।।२।।

तयैव रिक्ता बहुरि लेप्यशक्ता……… ।
नत्वा त्रिविक्रमं वक्ष्ये तत्क्रमं क्रमतः सताम् ।।३।।

ग्रंथे मानप्रकाशे …… ……………………… द्धि ।
स्वरूपं तद्भिन्नं फलं तत्र प्रवर्तने[4] ।।४।।

सब धर्मों के एक मात्र साक्षी पुंडरीकाक्ष (भगवान् विष्णु) को (प्रणाम करके), मनु (स्मृति) आदि शास्त्रों का अवलोकन कर शुद्धि का यहाँ (निरूपण किया जाता है) ।।१।।

शुद्धि के लिये अनेक स्मृतियों के मत कहे गये हैं । महामना श्रीमान मुरारिदास, स्वल्परूप में (धर्मादि) विचारणीय है । वही शुद्धि प्रकृष्ट रूप से सिद्ध है यदि वह सिद्धि (पूर्ण) हो ।।२।।

त्रिविक्रम (विष्णु) को नमन करके उस क्रम को क्रम से कहता हूँ ।।३।।

मान प्रकाश ग्रंथ में ………… :

स्वरूप भिन्न होने पर फल (परिणाम) भिन्न होता है ।।४।।

---

१. प्रणम्य, २. निरूप्यते, ३. सध, ४. प्रवर्तंते

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

सामान्यतश्चतुर्वर्णा संस्थानो[1]त्पत्ति सूत[2]
........................[3] नां च विशेषतः ।।५

सद्यः शौचादि दशधा विविधाशौचमोचनं
शंकरं तु वि.................................जम् ।।६।।

तथा नाशविशेषोत्थं मांसपिंडादिजं तथा ।
तथा निर्हरणाख्यातं मन.......................... ।।७।।

.........रनधिकारित्वमुददानाद्यनर्हता ।
औरसादिक्रमेणैव दशधा ....[4] लक्षणम् ।।८।।

पत्रांक ३ अ.

(शूद्रकार्यसंस्पर्शनं तथा
अत्रेदं तात्पर्यं सर्वाशौचा भागे-ती ते द ३)

...... पते रजः ...
जननं वा विपत्तिर्वा यस्या हस्तस्य शर्वरी
अशौचे स्पर्शाधिकारः तत्रांगिराः ।।९।।

सामान्यतया चारों वर्णों की संतानोत्पत्ति का सूतक (सबको होता है किन्तु ब्राह्मणों का) विशेष रूप से होता है ।।५।।

तुरंत का शौच दस प्रकार का (से) होता है । उस आशौच की शुद्धि की विधियाँ भी अनेक हैं ।।६।।

मांस पिंड से बने हुए का नाश (मृत्यु) हो तो उसका श्मशान ले जाना ही प्रसिद्ध (उचित) है ।।७।।

अनधिकारी की अवस्था में जल-दानादि भी उचित नहीं है । औरस आदि पुत्र के भी क्रमानुसार दस प्रकार (लक्षण) कहे गये हैं ।।८।।

(शूद्र का कार्य और स्पर्श, सब प्रकार के आशौच भाग में यहाँ यह तात्पर्य ऊपर मार्जिन में)

रज-रजो दर्शन
जनन (प्रसव) हो वा विपत्ति (मृत्यु) हो, जिसका वह दिन होता है उसी की रात (मानी जाती है) अंगिरा के मत के अनुसार आशौच में स्पर्श का अधिकार ‥ ।।९।।

---

१. संतानोत्पत्ति २ सूतकं, ३ वर्तते सर्ववर्णानां, विप्रा ४. पुत्र

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

चतुर्थेऽहनि ...¹ वर्यः संस्पर्शो ब्राह्मणस्य तु ।
पंचमेऽहनि विज्ञेयः संस्पर्शः क्षत्रियस्य तु ।।१०।।

षष्ठेऽहनि[1] तु विज्ञेयं वैशस्य स्पर्शनं बुधैः ।
........²दंगस्पर्शः[2] कर्तव्य :—अतएव देवलः ।।११।।

अशोचकालाद्विज्ञेयं स्पर्शसान्तु विभागतः ।
शूद्र-विट्-क्षत्र-विप्राणां यथाशास्त्रं प्रदर्शनात् ।।१२।।

एवं च सति ब्राह्मणादीनां दशाहादिभ्यो मनूक्तेभ्यो
यन्यूनाधिकं³ समयत्वमशौचस्पर्शनं
⁴ऋष्यन्तरोक्तम्[3]
तद्गुण युक्तहीन विषयं बोद्धव्यं
अथ जननाशौचं तत्र मनुः ।।१३।

जनने प्येवमेव स्यात⁵ विप्राणां शुद्धिमिच्छताम् ।
सर्वेषां शावमाशौचं[4] मात्रापित्रोश्च सूतकम् ।।१४।।

ब्राह्मण वर्ण के लिये चौथे दिन स्पर्श करना चाहिये तथा क्षत्रिय को पाँचवें दिन स्पर्श करना कहा गया है ।।१०।।

बुद्धिमानों का कहना है कि वैश्य को छठे दिन स्पर्श करना चाहिये इसलिये देवल कहते हैं कि छठे दिन ही उसका अग स्पर्श होना चाहिये ।।११।।

शास्त्र के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के लिये अलग-अलग आशौच-काल और स्पर्श का निर्णय होता है ।।१२।।

मनु के अनुसार ऐसा होने पर ब्राह्मणादि का आशौच दस दिन पर्यन्त कहा गया है । अन्यों के (अन्य वर्णों के) लिये कम अधिक का समय है । अन्य ऋषियों के भी मत कहे गये हैं—गुणयुक्त और हीन विषय को जानना चाहिये ।१३।।

जननाशौच के लिये मनु कहते हैं कि शुद्धि चाहने वाले ब्राह्मणों के जननाशौच में इसी प्रकार का नियम है । मृतक का आशौच सबको लगता है । माता पिता का भी सूतक होता है ।।१४।।

---

१. कर्तव्यः २. तदंग ३. यन्यूनाधिक, ४. ऋष्यन्तरोक्तम् ५. जनने प्येवमेव स्यात्

---

1. षष्ठेऽहनि, 2. अत्रेदं तात्पर्यं सर्वाशौच(ता) भागेऽतीते, 3. ऋत्वनन्तरं प्रोक्तं, 4. माता-पित्रोश्च

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मानुर्वा सूतकं प्राहुरूपस्पृश्य पिता शुचिः ।
अस्या······ जननेऽपि जन्मन्यपि ·········· ।।
एवमेव मरणवदशौचं दशाहादिव्यापकं भवति ।।१५।।

अयं विशेष :

शावमाशौचं मरण········ ······ स्पृश्यत्व[1] ।
सर्वेषामशौचभागिनां परन्तु सूतकं प्रशव[2] निमित्तकं
पुनः स्पृश्यत्वं[1] मात्रापित्रोरेव तत्रापि विश[3]··· ····
···· ·· एव कारार्थः
मातुरेव दशाहव्यापकमस्पृश्यत्वलक्षणं प्राहुः
उपस्पृश्य स्नात्वा पिता ।।१६।।

पत्रांक ३ ब.

च स श्चन्तं

जाते पुत्रे पितु[4]स्नानं सचेलस्य[2] विधीयते ।
माता शुद्धो दशाहेन[3] स्नात्वोपस्पर्शनं ·· ··· [5] ।।१७।।

मनु कहते हैं कि जननाशौच में पिता की शुद्धि स्नान करने से होती है । इसी प्रकार मरण का आशौच भी दस दिन तक रहता है ।१५।।

यह विशेष है ····

मृतक शरीर का आशौच, मरण ···· ··· ····· स्पर्श इस आशौच के सभी भागीदारों का (मरणकाल अस्पृश्यत्व होता है) परन्तु, सूतक प्रसव (जनन , के निमित्त से (होता है), फिर माता पिता का अस्पर्शन (अस्पृश्यता) होता है । वहाँ भी (प्रकरण) विशेष है ।

मनु ने दस दिन पर्यन्त अस्पृश्य-काल का लक्षण कहा है । स्नान करने के पश्चात् ही पिता की शुद्धि होती है ।।१६।।

च स श्चन्तं अस्पष्ट

पुत्र के जन्म होने पर पिता को वस्त्र सहित स्नान करना चाहिये अर्थात् पहिने हुए वस्त्र धोये जांय । माता की शुद्धि दसवें दिन स्नान (करने) से होती है ।।१७।।

---

१. मरणकाले अस्पृश्यत्वं, २. प्रसव, ३. विशिष्टः[4], ४. पितुस्नानं, ५. तथा

---

1. पुनरस्पृश्यत्वं, 2. सचैलस्य, 3. शुद्धे दशाहेन, 4. विशेषः

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अंगिरा :—

सूतके सूतिकावर्ज्यमंगस्पर्शो न दुष्यति ।
संस्पर्शे सूतिकायास्तु स्नानमेव विधीयते ।।१८।।

यदि-नकः[1] पत्नी-संस्पर्शनं करोति तदा तस्यापि
यावत् सूतकमस्पृश्यत्वम्—
तथा च पराशरः
यदि पत्न्यां प्रसूतायां द्विज[1] संपर्कमिच्छति ।
सूतकं तु भवेतस्य[2] यदि विप्रः षडंग-वित् ।।१९।।

षडंगवेत्तुरपि प्रसूतास्पश दशाहव्यापकमस्पृश्यत्वं भवतीत्यर्थः ।
अत्र संपर्कोऽभिगम इति व्याख्यातमयुक्तम्[3] ।
मातुरेव सूतकं तां स्पृशतः पितुर्नेतरेषामिति ।
स्वमनुनैकमूलत्वात् ।।२०।।

अंगिरा का कथन है कि—

सूतक प्रवृत्ति में प्रसूति को छोड़ स्पर्श का दोष नहीं होता, किन्तु प्रसूति का स्पर्श होने पर स्नान होना चाहिये ।।१८।।

यदि पिता उस स्थिति में पत्नी का स्पर्श करे तो उस समय उसको भी उतने समय तक का सूतक रहेगा ।

पराशर कहते हैं—

यदि ब्राह्मण अपनी प्रसूता पत्नी का स्पर्श करना चाहे तो वह वेद-वेदांग का पारगंत ज्ञाता हो तो भी उसे सूतक प्रवृत्त हो जाता है ।।१९।।

भाव यह है कि षडंगवेत्ता वेदपाठी ब्राह्मण को भी प्रसूता को स्पर्श करने से दस दिन का सूतक लगेगा ही । (दस दिन बाद ही वह शुद्ध होगा)

यहाँ सम्पर्क का अभिगमन अर्थ करना अयुक्त है, ठीक नहीं है । मनु भी कहते हैं कि उसे (प्रसूता को) छू लेने से (जातक के) पिता को ही सूतक लगता है, औरों को नहीं ।।२०।।

---

१. जनक:

---

1. द्विजः, 2. भवेत्तस्य, 3. व्याख्यानमयुक्तम्

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

ब्र. पु. णे. (ब्रह्माण्डपुराणे)
सूतके तु मुखं दृष्ट्वा जातस्य जनकः शुचिः ।
कृत्वा सचैलस्नानं तु शुद्धो भवति तत्क्षणात् ।।२१।।

अन्यास्तु मातरस्तद्वत्तद्देहं[1] न व्रजन्ति चेत् ।
स पिण्डाश्चापि संस्पृश्याः सन्ति सर्वेऽपि नित्यशः ।।२२।।

अन्या मातरः सपत्नीमातरः तद्देहे[2] व्रजन्तीत्यत्र ।
तस्याः स्पर्शनमपि विविक्षितम्[3] ।
अस्पर्शे तु स्नानं विनैव शुद्धाः एव सपिण्डा ।
अपितत्स ·· ··· · ·· · · ने शुद्धाः ।।२३।।

अत्र स्त्री-जन्मनि स्नानोपदेशात् पितुरपि
स्नानं विनैव शुद्धिरिति बोद्धव्यं तथा ब्राह्मणी क्षत्रि ··· ··· ।।२४।।

स्वयं मनु द्वारा एक मूल भाव से
ब्रह्माण्ड पुराण में—

जन्मे हुए (बालक) का सूतक में मुख देखने से भी पिता शुद्ध ही है। वह सचैल स्नान से शुद्ध हो जाता है ।।२१।।

दूसरी व सौतेली माताएँ भी यदि (प्रसूता की) देह को स्पर्श न करें तो वे भी सब सपिण्डा होते हुए भी सदा स्पर्श करने के योग्य हैं ।।२२।।

भाव यह है कि अन्य माताएँ तथा सौतेली माताएँ यदि उसके (प्रसूता के) पास जायें तो भी उसे स्पर्श करेंगी। (अर्थात् स्नान से शुद्ध होगी),
यदि स्पर्श न करें तो विना स्नान किये भी वे शुद्ध हैं। इसी प्रकार का नियम सपिण्ड लोगों के लिये भी हैं ।।२३।।

यहाँ स्त्री के प्रसव काल में स्नान का उपदेश है। पिता को भी स्नान करना उचित है । बिना इसके शुद्धि नहीं होती । तथा ब्राह्मणी, क्षत्रि (याणी) ।।२४।।

---

1. तद्गेहं, 2. तद्गेहे, 3. विवक्षितम्

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

द्वितीयः किरणः

पत्रांक १७ अ.

......पद निर्द्दलद्धरा न खण्डवेनूत्करै-
र्दिनं समभवन्निशा नृपमनोविनोदक्षमा ।
विलक्षणी गतीः स्वयं तुरगराजमध्यापयन्
कृदेति सविचारयन् धरणिचक्रचूडामणिः ।।१।।

धर्मंस्थापयितुं धरासु धरणीं सुस्थां विधातुं तथा
पिष्ठान्नृपतीनतीव विकलीकर्तुं प्रभूतो [1] (ऽभवत्) ।
देवानां सदनानि दातुमभितो नैतद्विनादिग्यजैः[1]-
रित्यालोच्य स पातिसाहतिलकः सम्मार[2] जिष्णुञ्जयी ।।२।।

क्षोणीरक्षणकारणाय विभुना स्वांगेन[3] कृष्णेन यो
गो-ब्रह्मादिक-धर्म-सप्त-नगरी-रक्षार्थमाविष्कृतः ।
तस्याः प्रार्थनतः प्रतापतरणिस्तल्लोकरक्षापरः
सोऽयं सर्वगुणाश्रयो विजयतां श्रीपातिसाहो भुवि ।।३।।

अखण्ड वेणु (बांस) के समूह से दिन भी रात के समान हो गया, जो रात राजा के मनोविनोद के योग्य हो गई। विलक्षण गति वाला वह भू-मण्डल में शिरोमणि "कार्य हो गया" ऐसा विचार करता हुआ स्वयं तुरगराज (घोड़े) को आगे बढ़ाता हुआ ।।१।।

धर्म की स्थापना करने के लिए, जगत् में पृथ्वी की सुव्यवस्था करने के लिये तथा पीसे हुए (दबाये हुए) राजाओं को और भी अधिक व्याकुल करने के लिए वह समर्थ हुआ। देव स्थानों को प्रचुर दान देने के लिये जो दिग्विजय किये बिना संभव नहीं है ऐसा सोच कर उस जयशील बादशाह ने जय की इच्छा वाले वीर का (विष्णु) स्मरण किया ।।२।।

जो सर्व व्यापक श्रीकृष्ण स्वयं के रूप से पृथ्वी की रक्षा हेतु, गौ, ब्राह्मण, धर्म और सप्त पुरियों (तीर्थों) की मर्यादा रक्षार्थ प्रकट हुए और उसकी (पृथ्वी की) प्रार्थना के कारण लोक-रक्षा में तत्पर प्रताप रूपी सूर्य रूप सर्व गुणाश्रय यह बादशाह (सम्राट्) इस भू-मण्डल में विजय को प्राप्त करें। (आशीर्वचन) ।।३।।

---

१. अभवत्, २. सस्मार, ३. स्वांगेन

---

1. दिग्जयैः

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

य एनमवजानन्ति शकन्ते सुविशंकिता:[1] ।
सद्भिस्त एव निर्ग्राह्या मूढाः पण्डितमानिनः ।।४।।

श्रीकृष्णांगभवे[2] (द्)[१]भूपः कलौ गूढ-सुलक्षणः ।
सेवनीयो जनैर्नित्यं परत्रेह च शर्मणे ।।५।।

अयं क्षमा सहस्राक्ष वृन्द वृन्दारकांचिल:[3] ।
चक्रपाणिरिव ज्ञेयो विज्ञैरिह न संशयः ।।६।।

पत्रांक १७ ब

अन्योऽपि यो महीपालः स विष्णुरिव कीर्तितः[२] ।
नाविष्णुरवनीपः स्यादिति वाक्यनिदर्शनात् ।।७।।

अतएवायमेवैकः कलौ कलियुगे स्थितैः
आश्रमैरपि वर्णैश्च सेवनीयः स्वभावतः ।।८।।

जो व्यक्ति शंकालु होकर इसका अपमान और संदेह करते हैं सत्पुरुषों द्वारा उन अभिमानी मूर्ख पंडितों का निग्रह (दमन) होना चाहिये ।।४।।

कलियुग में मनुष्यों को इह लोक और परलोक में सुख की प्राप्ति के लिये इसकी सेवा करनी चाहिये क्योंकि गूढ और अच्छे लक्षणों वाला राजा श्रीकृष्ण का ही स्वरूप होता है ।।५।।

यह क्षमा (पृथ्वी) रूप है, इन्द्र है, देवसमूह से पूज्य है, चक्रधारी साक्षात् विष्णु है, ऐसा विद्वानों द्वारा समझा जाना चाहिये । इस विषय में यहाँ कोई संशय का कारण ही नहीं है ।।६।।

दूसरा कोई भी राजा हो वह भी विष्णु के समान ही पूज्य है । राजा विष्णु-रूप नहीं होता यह सिद्धान्त ही नहीं है ।।७।।

इसलिये कलियुग में चारों वर्ण और आश्रपवालों द्वारा यही एक (राजा) सहज रूप से सेवनीय है ।।८।।

---

१. भवेद्, २. भगवदगीता-नराणां च नराधिपः अ. १० श्लोक ७

---

1. स्वविशंकिता 2. भवो 3. वृन्दारकांचितः

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यो रक्षति क्षमा-धर्मं ब्रह्मगास्तीर्थमण्डलम् ।
स न किम्विष्णुरेव स्यादिति धर्मः सनातनः ।।९।।

अष्ट-दिक्पाल-कलया सामान्योऽपि नृपो भवेत् ।
अयं भवत्[1] भूखण्ड-मण्डलाधिपतिः प्रभुः ।।१०।।

ऐहिकार्थमतोदेवः[2] सेवनीयस्सदाजनैः
मनोरथपथे कुर्यादपार्थमपि सार्थकम् ।।११।।

अव्याहतगतिर्यस्मात्तस्माद्विष्णोः किलांशभू ।
पुंसे ददाति तेनैव परमार्थमयं विभुः ।।१२।।

सेवनीयो यमेतस्मात्परत्रेह च शर्मणे ।
मनूक्तमतमालोक्य राजचर्येयमीर्यते ।।१३।।

जो क्षमाधर्मा (अथवा पृथ्वी और धर्म), ब्राह्मण, गौ और तीर्थों की सुरक्षा करता है, क्या वह साक्षात् विष्णु नहीं है ? यही तो सनातन (शाश्वत) धर्म है ।।९।।

एक साधारण (सामान्य) नरेश भी आठों दिक्पालों की कलाओं से युक्त होता है । यह तो इस भू-खण्ड पर मण्डलाधिपति होता है, समर्थ (प्रभु) होता है ।।१०।।

ऐहिक (लौकिक) स्वार्थ-सिद्धि के लिये लोगों द्वारा इस देव (राजा) की सेवा की जानी चाहिये । अपने मनोरथ को पूर्ण करने के लिये अपार्थ (अप + अर्थ = व्यर्थ) को भी सार्थक बना लेना चाहिये ।।११।।

इसकी (राजा की) अप्रतिहत गति होती है । कोई विरोध नहीं कर सकता । इसीलिये यह विष्णु का अंश-भूत है । यह विभु (समर्थ) होने से मनुष्य को परमार्थ की भी प्राप्ति करा देता है ।।१२।।

इसलिये इहलोक और परलोक के सुख के लिये इसकी सेवा करनी चाहिये । मनु महाराज के मत को देखते हुए राजा श्रेष्ठ पुरुष होता है, ऐसा कहा जाता है ।।१३।।

---

१. भवति। २. मतोदेवः।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तथा च मनुः-

अराजके हि लोकेऽस्मिन् सर्वतो विद्रुते भयात् ।
रक्षार्थमस्य सर्वस्य राजानमसृजत्प्रभुः ।।१४।।

इन्द्रनिलयमार्क्का[1]नामग्नेश्च वरुणस्य च ।
चन्द्रवित्तेशयोश्चैव मात्रा निर्कृत्य[1] शाश्वतीः ।।१५।।

यस्मादेषां सुरेन्द्राणां मात्राभ्यो निर्मितो नृपः ।
तस्मादभिभवत्येष सर्वभूतानि तेजसा ।।१६।।

पत्रांक १८ अ

तपत्यादित्यवच्चैव चक्षूंषि च मनांसि च ।
न चैनं भुवि शक्नोति कश्चिदप्यभिवीक्षितुम् ।।१७।।

सोऽग्निर्भवति वातश्च सोऽर्कः सोमःस धर्मराट् ।
स[2] कुबेरस्स वरुणः स महेन्द्रः प्रभावतः ।।१८।।

मनु वाक्य और भी—

राजा के अभाव में लोक में सर्वत्र भय का आतंक छा जाता है। इससे सबकी रक्षा के लिये प्रभु (ईश्वर) ने राजा का निर्माण किया है ।।१४।।

इन्द्र, वायु, यम (धर्मराज), सूर्य, अग्नि, वरुण, चन्द्र और कुबेर की शाश्वत मात्राओं को लेकर ।।१५।। (राजा की सृष्टि की)

क्योंकि इन सब प्रधान देवताओं की कलाओं से राजा का निर्माण हुआ है। इसीलिये अपने तेज से सभी भूतों पर (जीवों पर) अपना प्रभाव रखता है। ।।१६।। (पराजित करता है)

यह सूर्य के समान तपता है (प्रतापवान्) यही नेत्र हैं, और मन है। (अथवा यह राजा देखने वालों के नेत्र और मन को सूर्य के समान तपाता है) अतः पृथ्वी पर कोई भी इसे देखने में समर्थ नहीं होता है। ।।१७।।

यह (राजा) अपने प्रभाव से अग्निरूप है, वायुरूप है, सूर्य-चन्द्ररूप है, धर्मराज- (यम) रूप है, वरुणरूप है और देवराज- (महेन्द्र) रूप है।।१८।।

---

१. अर्कानाम्-विकल्प से "अर्क्क" भी लिखा जाता है।

---

1. निर्हृत्य । 2. कुबेरस्सो ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

बा........पि[1] नावमन्तव्यो मनुष्य इति भूमिपः ।
महती देवता ह्येषा नररूपेण तिष्ठति ।।१६।।

एकमेव दहत्यग्निर्नरं त्वनूपसर्पिणम् ।
कुलं दहति राजाग्निस्सपशुद्रव्यसंचयम् ।।२०।।

कार्यं सोऽपेक्ष्य[2]शक्तिं च देशकालौ च शक्तितः ।
कुरुते धर्मसिद्धचर्थं विश्वरूपं पुनः पुनः ।।२१।।

यस्य प्रसादे[3]पद्मा श्रीर्विजयश्च पराक्रमे[1] ।
मृत्युश्च वसति क्रोधे सर्वतेजोमयो हि सः ।।२२।।

यस्तु तं द्वेष्टि संमोहात्स विनश्यत्यसंशयम् ।
तस्य ह्याशु विनाशाय राजा प्रकुरुते मनः ।।२३।।

"यह मनुष्य ही तो है" ऐसा मान कर बालक राजा का भी अपमान नहीं होना चाहिये क्योंकि नर-रूप में यह बड़े देवता की (शक्ति) रूप में अवस्थित है ।।१६।।

यदि (असावधानी से भी) समीप जाकर स्पर्श करें तो उस एक ही व्यक्ति को अग्नि जलाती है, किन्तु राजा की (क्रोध) अग्नि सम्पूर्ण कुल को और संचित धन-सम्पत्ति को और पशु को जला देती है—अर्थात् नष्ट कर देती है ।।२०।।

वह (राजा) देशकाल तथा प्रयोजनानुसार कार्य और शक्ति का विचार कर (अवेक्ष्य), (अपेक्षा कर=अपेक्ष्य), सिद्धि के लिये बार-बार विश्वरूप (अनेक रूप), धारण करता है, कभी शत्रु, कभी मित्र आदि अनेक भाव रखता है ।।२१।।

जिसकी प्रसन्नता में (कृपा में) लक्ष्मी, पराक्रम में विजय और क्रोध में मृ का निवास है, वह राजा निश्चय ही सर्व तेजोमय है ।।२२।।

जो मोह के वशीभूत होकर (अज्ञानवश) उससे द्वेष करता है वह निश्चय ही नष्ट हो जाता है—क्योंकि उसको शीघ्र नष्ट करने के लिये राजा मन में संकल्प कर लेता है । सचेष्ट करता है ।।२३।।

---

१. बालोऽपि । २. सो वेक्ष्य-सोपेक्ष्य दोनों के भाव समीचीन है । ३. प्रसादे ।

---

1. पराक्रमो ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अत एव सदा मान्यः पूज्यश्च वसुधाधिपः ।
देवाप्सरामरास्तेन पूजितेऽस्मिन् प्रपूजिताः ।।२४।।

येन संतोषितो विष्णोरङ्गभूतोऽयमीश्वरः ।
जगत्संतोषितं तेन जगन्नाथो यतो हि सः ।।२५।।

सर्वदेवमयं देवं सर्वभूतहिते रतम् ।
नमन्ति सर्वदा सर्वे सर्वथा सर्वसिद्धये ।।२६।।

पत्रांक १८ ब

स समः सर्वभूतानां सर्वधर्मप्रवर्तकः ।
सर्वभावेन सर्वेण सेव्यस्सः सर्वत्र सर्वदा ।।२७।।

इति नत्वा....[1] सत्यमन्नदः प्राणदो मतः ।
तेनाप्येष जनैः पूज्यो यस्याभूस्सोऽन्नदो मतः ।।२८।।

इसलिये राजा का सदा-सर्वदा सम्मान और पूजा (आदर) होनी होनी चाहिये । उसकी भली प्रकार पूजा होने से देवता, अप्सरा तथा अन्य सभी देवों की पूजा हो जाती है ।।२४।।

जिसने विष्णु के अंगभूत राजा को संतुष्ट कर दिया, उसने मानो सारे जगत् को संतुष्ट कर दिया क्योंकि वह (राजा) जगदीश का ही स्वरूप है ।।२५।।

राजा को सब देवताओं का स्वरूप जानकर तथा सबके कल्याण-साधन में तत्पर(संलग्न)समझकर सब लोग सर्वदा सब प्रकार से अपनी कामना-सिद्धि के लिये उसे नमन करते हैं ।।२६।।

वह (राजा) सब प्राणियों में समभाव रखता है । सभी धर्मों का प्रवर्तक (संरक्षक, सम्मानकर्ता) होता है अतः उसकी सर्वत्र सर्वदा सर्वभाव से सेवा की जाती है ।।२७।।

इस प्रकार उसको नमन करके यह भाव रखे कि सचमुच वह अन्नदाता है । यह भी माना जाता है कि वह प्राणदाता भी है, रक्षा करता है । इसलिये वह लोगों द्वारा पूज्य है जिसकी भूमि भी अन्नदात्री है । ऐसा मत प्रशस्त है ।।२८।।

१४से२३तक के श्लोक मनुस्मृति अ-७श्लोक३से१२ तक के उद्धृत हैं । १. च तं (हि तं) ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

न भजन्ति जना ये तं त एव गतबुद्धयः ।
भवन्ति भुवि दैवेन क्रमेणागतबुद्धयः ।।२९।।
ये पुनः सर्वभावेन भजन्ति तमकब्बरम् ।
कलिकल्मषमाहात्य[1] ते स्युः स्वागतबुद्धयः ।।३०।।
परलोकोदयस्तेषामैहिकेनानुमीयते ।
प्रमाणेन प्रभावन्तः सन्तः संति तदन्वितः[2] ।।३१।।
तत्प्रभावशाद्धर्मः[3] सत्यवत्सत्यविक्रमः ।
पराक्रम-क्रमेणैव कुक्रमो गतविक्रमः ।।३२।।
स्व-धर्मनिरताः सर्वे स्वकर्मणि परा अपि ।
यस्य निर्देशनादासु:[4] प्रन^१ मस्यो न किं भवेत् ।।३३।।
तथाह भीष्मः मोक्षधर्मे—
यः पालयति गां धर्माद्धर्ममाचरति स्वयम् ।
स पूज्यो विष्णुवत्तात न द्वेष्यो भूतिमिच्छता ।।३४।।[२]

जो लोग इसकी सेवा नहीं करते वे नष्ट बुद्धि वाले हैं। इस लोक में वे दैव-योग (भाग्य) से धीरे-धीरे बुद्धिहीन हो जाते हैं ।।२९।।

जो लोग सर्व भाव से उस अकबर की सेवा स्वीकार करते हैं वे कलियुग के दोषों से मुक्त होकर स्वागत करने योग्य सुबुद्धि वाले हो जायेंगे ।।३०।।

इहलौकिक उन्नति (अभ्युदय) से ही उनके परलोक के अभ्युदय का अनुमान हो जाता है। यह प्रत्यक्ष प्रमाण है कि वे प्रभावशाली और सुख-ऐश्वर्य से युक्त होते हैं ।।३१।।

उस प्रभाव से धर्म की वृद्धि होती है और सत्य के समान ही उनका वास्तविक विक्रम बढ़ता है। उस पराक्रम के प्रभाव से क्रमशः (कु=पृथ्वी) पार्थिव शौर्य की वृद्धि होती है ।।३२।।

सभी लोग अपने-अपने धर्म में संलग्न हैं और अपने-अपने कर्मों में परायण हैं। जिसके निदशन (आज्ञा) से इनका बढ़ावा होता है, जो प्रणम्य (शरण्य) हैं उनका कौनसा हित नहीं होता ।।३३।।

इसी प्रकार मोक्ष धर्म में भीष्म कहते हैं—

जो धर्म से पृथ्वी का पालन करता है और स्वयं भी धर्म का आचरण करता है, हे तात ! वह विष्णु के समान ही पूजा जाता है अतः जो अपना हित चाहता है उसे उससे द्वेष नहीं करना चाहिये ।।३४।।

---

१. प्रणमस्यो । २. महाभारत के शांतिपर्वान्तर्गत मोक्षधर्म-पर्व में अ १७४-३६५तक कई अध्यायों में राजधर्म वर्णित है ।

---

1. आहृत्य । 2. तदन्विताः । 3. तत्प्रभाववशाद्धर्मः । 4. सन ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

एतद्विष्णुपुराणे–

ब्रह्मण्यस्सत्यवादी च शूरो धर्मरतः शुचिः ।
अतुष्टश्चारदृक् दान्तस्स स्यात्सर्वजनप्रियः ।।३५।।

पत्रांक १६ अ

जनैरपि स पूज्योऽस्ति मान्यवे[1] पितृवन्नृपः ।
अराजकेन धर्मा स्युस्तेन राजा प्रशस्यते ।।३६।।

याज्ञवल्क्यः—

यादृक् तादृक् नरः पूज्यस्तत्रापि च नराधिपः ।
सर्वदेवमयो राजा तेन राजा प्रशस्यते ।।३७।।

तथाह गीतायां–

सर्वेषामेव भूतानामहमेकः सनातनः ।
विशिष्य पुनरेषोऽस्मि नराणां च नराधिपः[2] ।।३८।।

यही विष्णुपुराण में भी—

ब्राह्मणों का सेवक, सत्यवादी, शूरवीर, धर्मनिष्ठ, वाह्यान्तर पवित्र (राज्यवर्द्धन में) असंतुष्ट, गुप्तचरों से समाचार पाने वाला, इन्द्रिय-दमनकारी वह (राजा) लोकप्रिय होता है ।।३५।।

वह लोगों द्वारा समादृत (पूज्य) होता है और पिता के समान मान्य होता है । अराजकता का दमन कर धर्म की रक्षा हो (अस्तित्व) उसी से राजा की प्रशस्ति होती है ।।३६।।

याज्ञवल्क्य —

सामान्य मनुष्य भी जैसे तैसे पूज्य होता है तो राजा तो उससे अधिक होगा ही । राजा सब देवों का स्वरूप है अतः वह पूज्य है ।।३७।।

गीता में कहा है—
सभी भूतों में मैं ही एक सनातन (तत्व) हूँ । इसमें (राजा में) तो मैं विशेष रूप से अधिष्ठित हूँ क्योंकि मनुष्यों में राजा मैं ही हूँ ।।३८।।

---

१. -श्च । २. भगवद्गीता अ. १० श्लो. २७ का अंतिम चरण ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

इति श्रीकृष्णवाक्येन तदंशांशसमुद्भवः ।
अत्युन्नतविभूतित्वादूर्जितत्वात्स सेव्यताम् ।।३९।।

शास्त्रस्मृतिपुराणादिद्वारा निर्णीय पंडितैः ।
अवतारो महोदारो विष्णोरेव समीरितः ।।४०।।

विष्णुना न विना राजा यतो भवति कुत्रचित् ।
राजानः कति विख्याताः कृताः कलियुगेऽमुना ।।४१।।

अतो भरतखण्डे[1] कृतानेक[1] महीपतिः ।
स्वयमेकपतिर्भूमेस्सेव्यो विष्णुरिवाऽखिलैः ।।४२।।

यदालोकैर्विष्णुरिव ज्ञातोऽकब्बरभूपतिः ।
स तदेति कृदाचक्रे विक्रमाक्रान्त मा म[2] सः ।।४३।।

इस प्रकार भगवान् श्रीकृष्ण के कथनानुसार उनके ही अंश से राजा की उत्पत्ति है। राजा भगवान् की अत्यंत उन्नत विभूति से तथा ऊर्जस्विता (तेज) से पूज्य होता है। सेवनीय है।।३९।।

सब शास्त्र, स्मृतियां, पुराणादि द्वारा पंडितों से यह निर्णीत है कि राज भगवान् विष्णु का महान् उदार (उत्कृष्ट) अवतार कहा गया है ।।४०।।

जगत् में कहीं भी विष्णु (शक्ति) के विना राजा होता ही नहीं है इसलिये कलियुग में कितने राजा लोग विख्यात हुये हैं ।।४१।।

अत भरत खण्ड में अनेक राजा हुए हैं। वह पृथ्वी का एकमात्र स्वामी सब लोगों द्वारा विष्णु के समान ही सेवित (पूजित) होता है ।।४२।।

जब लोगों द्वारा (जगत् के द्वारा) बादशाह अकबर विष्णु के समान जाना गया तब वह अपने विक्रम (शौर्य) के आतंक (प्रभाव) से एकचक्र भूपति बना ।।४३।।

---

१. "तु" या-ऽस्मिन् । २. न ।

---

1. कृतावनेक।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तीर्थसंरक्षणार्थाय गोब्राह्मणहिताय च ।
साधूनामुपकाराय धर्मरक्षार्थमेव च ।।४४।।

पत्रांक १९ ब

धरणीरक्षणायैव दिग्जयाय धरातले ।
एतस्मादहमेतस्मिन् जातो दुष्टक्षयाय च ।।४५।

एतदर्थमहं कञ्चिद्दिग्जयाय महाबलम् ।
योजयामि महोदारवीर्यमूर्जितगौरवम् ।।४६।।

यदीय विक्रमादेव मुदितास्यादियं मही ।
मां च सञ्चितदर्पौघं जनाः जानन्ति सर्वतः ।।४७।।

यावन्तः सृष्टिसंभूतास्तावन्तो मामकब्बरम् ।
ज्ञात्वावतीर्णदैत्यारिमाचरन्ति कुलोचितम् ।।४८।।

आश्रमाश्चैव वर्णाश्च ये चान्ये वर्णसङ्कराः ।
कुर्वन्ति यवनास्तद्वत्स्वधर्मं स्वेन कर्मणा ।.४९।।

भगवान कहते हैं—तीर्थों की पवित्रता और मर्यादा की रक्षा के लिये गौओं और ब्राह्मणों के कल्याण के लिये, साधु-संतों के उपकार के लिये तथा धर्म की रक्षा के लिये, पृथ्वी के पालनार्थ इस धरा पर दिग्विजय प्राप्त करने के लिये और दुष्टों के नाश के लिये मैं इस (पृथ्वी में उत्पन्न हुआ हूँ ।।४४-४५।।

इस कार्य के लिये तथा दिग्विजय प्राप्त करने के लिये मैं किसी महाबली, महान् उदार, वीर-भाव वाले और उत्कृष्ट गौरवशाली (व्यक्ति) की योजना करता हूँ ।।४६।।

इस विक्रम (शौर्य) से यदि यह वसुन्धरा प्रमुदित (प्रसन्न) होती है तो सर्वत्र लोग मुझे संचित किये हुए अभिमान के समूह (राशि) के रूप में जानेंगे ।४७।।

इस सृष्टि में जितने भी उत्पन्न हुए (जीव हैं वे सब अकबर रूप में मैं ही अवतरित हूँ और दैत्यों का शत्रु हूँ ऐसा जानकर अपने-अपने कुल के अनुसार लोग आचरण करते हैं ।।४८।।

जैसे आश्रमी और वर्ण-धर्मानुचारी तथा अन्यान्य वर्णसंकर वाले अपने कर्म के अनुसार धर्माचरण करते हैं वैसे ही यवन लोग भी अपने धर्म का आचरण (पालन करते हैं ।।४९।।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

स्मृतिशास्त्रपुराणादि प्रोक्तधर्मेण कर्मणा ।
सर्वतः सर्वथा सर्वे कुर्वन्ति हरिपूजनम् ।।५०।।

बलिना[1] क्रम्यमानानामवनन्तु करोति यः ।
दुष्टानां दमनं[1] चैव यः करोति दिशामितम् ।।५१।।

यत्पूतापवसात्सर्वः[2] स्ववर्त्मनि भवेत्षस्थिरः ।
यथोक्तकरदानेन प्रजापि सुखिता मम ।।५२।।

वसुधापि तथा तुष्टा बीजैकेन सहस्त्रधा ।
उत्पत्तिं तनुतां सम्यक् सर्वेषामिह सर्वदा ।।५३।।

दुष्टानां दमनेन देवनिलयं तीर्थं च यस्थापये-[3]
देवं चेतसि चिन्तयन्निति मुहुर्ज्जल्लालदीनः कृती ।

पत्रांक २० अ

एकम्भारत भूतले/प्रभुमसौ विज्ञापितुं मानवा-
स्तद्वद्भूतलरक्षणाय विजयी सस्मार जिष्णुं पुनः ।।५४।।

स्मृतियों, शास्त्रों और पुराणों में वर्णित धर्म के अनुसार सब लोग सब जगह सब प्रकार से हरि की पूजा करते हैं ।।५०।।

जो बलवान् द्वारा आक्रान्त हैं, दबाये गये हैं उनकी जो रक्षा करता है, और जो दुष्टों का दमन करता है उसको मैं (ऐसा) आदेश देता हूं ।।५१।।

जो पवित्र है, और सब अपने निज पथ में स्थिर् रहते हैं मेरी वह प्रजा भी यथा निश्चित कर देने से सुखी होती है ।।५२।।

उसी प्रकार पृथ्वो भी एक बीज से हजार गुना होकर संतुष्ट होतो है । प्रफुल्लित होतो है । इस जगत् में (राज्य में) हमेशा सबको उत्पत्ति (उन्नति) भली प्रकार से वृद्धि को प्राप्त होती है ।।५३।।

जो दुष्टों का दमन करके देवालयों और तीर्थस्थानों की संस्थापना करे उसका इस प्रकार वह धन्य जलालुद्दीन अपने चित्त में बार-बार निरंतर चिन्तन करने लगा । इस भारत भूमि में यही एक मात्र समर्थ है ऐसा मनुष्यों को जनाने (विज्ञापित करने) के लिए उसी के अनुसार भूतल की रक्षा के लिए उस विजयी (सम्राट्) ने फिर जय पानेवाले (जिष्णुं) का स्मरण किया ।।५४।।

---

१. दमन

---

1 कलिना। 2 यत्पूतायवसात्सर्वः 3 यः स्थापये ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अथ स्मृतस्तेन महोग्रतेजा (:)
जिष्णुस्तदाज्ञावशगस्तदैव ।
स भानुवंशोचितमेव कर्म-
कर्तुं म्प्रपेदे जनुषेऽत्र वंशे ।।५५।।

यत्राभवद्भूप कुलावतंस
पृथ्वीनृपो नाम गुणप्रदीप्तः ।
तस्मादभूद्भारहमल्लभूप-
स्सद्धर्मकर्मार्जित पुण्यपुञ्जः ।।५६।।

जज्ञेऽथ तस्माद्भगवन्तदासः
प्रचण्डदोर्दण्डजितारिसंघः ।
तस्मात्स जिष्णुकृत विष्णुवाक्यो
जातो जयायास्य महीतलस्य ।। ५७ ।।

जाते जगत्यां कछवाहवंशे
राधाधवाराधनपूतपाणौ ।
दिङ् मं (ङ्) लं साधुमनस्तदानीं
वाले स्फुरत्तेजसि स प्रसन्नम् ।। ५८ ।।

इस प्रकार स्मरण किया गया हुआ महान् तेजस्वी, जय की इच्छा वाला तब उसकी आज्ञा के अधीन हुआ । वह सूर्य वंश के योग्य कर्म सम्पादन करने के लिए इस वंश में जन्मा ।।५५।।

इस कुल का अवतंस (शोभा) यह राजा हुआ । इसका पृथ्वीराज नाम और गुणों में प्रख्यात हुआ । इसी का पुत्र भारहमल्ल (राजा भारमल) संद्धर्म और सत्कर्म से पुण्यार्जन कर पुण्यशाली हुआ ।।५६।।

उसके भगवन्तदास पुत्र जन्मा (हुआ) । वह प्रचण्ड शक्तिशाली भुजावाला था और शत्रुसमूह कों जीतनेवाला हुआ । उससे जय प्राप्त करनेवाला वह (मानसिंह) इस पृथ्वी को जीतने के लिए विष्णु रूप उत्पन्न हुआ ।।५७।।

जगत् में राधापति श्री माधव (गोविन्दजी) की आराधना पूजा से जिसके हाथ पवित्र हो गये हैं उसके उस कछवाहा वंश में (उसने) जन्म लिया । उस समय वह वाल अवस्था में भी साधु स्वभाव वाला, तेज में स्फूर्तिवाला दिङ्मंडल को प्रसन्न करने वाला हुआ ।।५८।।

T CC-0. RQRI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मानेन सिंहो भवितोऽति[1] नून-
मवेक्ष्य स क्षोणिपतिः कृतज्ञः ।
नाम्ना रिपु[2] प्रात[१] भयंकरेण
श्रीमानसिंहस्तुल[२]यां चकार ।।५६।।

श्रीकृष्णे व्रजति स्वधामसुधा[३] याचे तदैकम्बरं
दत्वेकं तु[४] वरं द्वितीयमपि स क्षित्यै तिरोऽभूत्ततः ।
आद्यो धर्म विवर्धनाय भविता जिष्णुर्द्वितीयोदयं
मान क्षोणिपतिर्ययोर्निगदितुं धाताऽपिनालं यशः ।।६०।।

पत्रांक २० ब

[3]अर्थक्रमेणैव स मानसिंहः
सिंहोपमो विक्रमेण बभूव ।
विलक्षणं लक्षणलक्षणीय-
म्वपुर्विपक्ष (क्ष) य कारिभेजे ।।६१।।

मन्वादिमुनिवर्याना[५]मालोच्यमतमुच्यते ।
बुधैरेकोऽष्टदिक्पालो महीपालोनलोपमः ।।६२।।

निश्चय ही मान में वह सिंह के समान गौरवशाली हुआ। ऐसे क्षोणीपति (बादशाह) ने, जो कृतज्ञी है, यह देखकर (समझकर) शत्रुसमूह के लिए भय रूप उस श्री मानसिंह को अपना पुत्र बना लिया ।।५६।।

जब भगवान् श्रीकृष्ण अपने धाम को जाने लगे तो वसुधा ने एक वरदान मांगा तब वह एक वर देकर पृथ्वी को दूसरा वर भी (अपनी ओर से) देकर भगवान् तिरोभूत (अन्तर्धान) हो गये। पहला वरदान धर्म के विवर्धन के लिए हुआ और दूसरा जयार्थ। इस प्रकार मानसिंह और क्षोणिपति (बादशाह) दोनों के यश को बखानने के लिये ब्रह्माजी भी समर्थ नहीं हैं ।।६०।।

वह मानसिंह क्रम से (धीरे-धीरे) अपने शौर्य और पराक्रम से सिंह के समान हो गया। विलक्षण (चमत्कारी) लक्षणों से युक्त शत्रुदल को नष्ट करने वाला शरीर उसने प्राप्त किया ।।६१।।

मनु आदि श्रेष्ठ मुनियों के मत से विद्वानों द्वारा यह कहा जाता है कि एक राजा ही नल (राजा) के समान आठ दिग्पालों का स्वरूप है ।।६२।।

---

१. व्रात २. तनयं ३. वसुधा ४. न्तु ५. णा

---

1. भवितेऽति 2. व्रात 3. अथक्रमेणैव

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तथाहि—

करे वज्री बले वायुर्यमः कोपेऽनलस्त्विषि ।
अर्कस्तेजसिवित्तेशः कोषे स वरूणो रणे ।।६३।।

मानसिंह[1]सुरेन्द्रादिमात्रा निर्मितविग्रहः ।
विभूतिभिरिव यक्षः[1] स क्षमापतिराारभौ ।।६४।।

यावन्नृपगुणव्रातैरन्वितोऽयमभून्नृपः ।
तपत्यादित्यवल्लोकानतएव विलक्षणः ।।६५।।

तथाहि राजधर्मे—

राजा स्यादष्टदिक्पालमात्रानिर्मितलक्षणः ।
बालोऽपि हि नृपः पूज्यो न मनुष्य इति स्मरन् ।।६६।।

अतएव महीं वत्स (वत्) पालयन्स्वेन तेजसा ।

भीष्म-वचनं युधिष्ठिरं प्रति—

विजयाद्विनयाद्वापि विक्रमाल्लोकरंजात् ।।६७।।[2]

और भी—

वह (राजा) वाहुवल में वज्रधारी (इन्द्र), बल में वायु, क्रोध में साक्षात् यमराज, प्रकाश में अग्नि, तेज में सूर्य, धन में कुवेर और युद्ध में वरूण के समान है ।।६३।।

वह राजा मानसिंह इन्द्रादि देवताओं के अंश का विग्रह है। विभूतियों से वह यक्ष (राज, कुवेर) है। इस प्रकार उसका जीवन प्रारम्भ हुआ ।।६४।।

जितने भी राजनेताओं के गुण समूह होते हैं उन सवसे वह युक्त हुआ। जगत् को वह सूर्य के समान तपाता है अतः वह वड़ा ही विलक्षण है ।।६५।।

राजधर्म प्रकरण में कहा है—

अष्ट दिग्पालों के अंश से ही राजा का निर्माण होता है। यदि वह आयु में वालक भी हो तो भी पूजनीय है, उसे सामान्य मनुष्य नहीं समझना चाहिये। ।।६६।।

इसलिये उसे चाहिये कि वह पृथ्वी का पालन अपने तेज से पुत्रवत् करे।

युधिष्ठिर के प्रति भीष्म के वचन—

राजा विजय से, नम्रता गुण से, विक्रम और शौर्य से तथा लोक रंजन से (सम्मानित, मान्य होता है) ।।६७।।

---

१. मानसिंहः

---

1. ह्यक्ष 2. रंजनात

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यावद्भिस्तद्गुणैस्सोऽयं युक्तो जगति दृश्यते ।
यद्यद्विभूतिमदेतद्वाक्यात्कृष्णो[1] भुवि स्फुटम् ।।६८।।

पत्रांक २१ अ

न युज्यते दिग्विजयं विधातुं
स्वयं किमन्यैः परिकल्पयामि ।
तदानिजज्ञातिगणान्प्रमत्तान्
धर्मद्विषोऽवेत्य लतान्दिदेश[1] ।।६९।।

आमेरी[2] नाम्नी नगरीं सुरम्या
या दक्षिणस्यां दिशि संचकास्ति ।
तस्यास्तु तं भारहमल्लभूपं
समानयामास[3] स पातिसाहः ।।७०।।

स सूर्यवंशोद्भवभूपतेजाः
समं स्वसैन्यैस्समुपाजगाम ।
सम्मानयित्वा तमनेन साकं
संबंधमप्येष तदा चकार ।।७१।।

जितने भी राजा के गुण कहे गये हैं उनसे युक्त हुआ यह संसार में (आदर की दृष्टि से) देखा जाता है। जो जो भी उत्कृष्ट विभूति जग में है भगवान् के कथनानुसार वह धरा में कृष्ण रूप में ही प्रगट है ।।६८।।

यदि दिग्विजय करने के लिए मैं स्वयं योग्य नहीं हूं तो दूसरों के द्वारा क्या करा सकता हूँ (या कर सकता हूँ) तब अपनी जाति वालों का उन्मत्त धर्म विद्वेषी जानकर उनको लथाड़ दी (लतान्दिदेश) ताड़ना दी ।।६९।।

आमेरी (आमेर) नाम की सुरम्य नगरी है जो दक्षिण दिशा में प्रख्यात है। उसका स्वामी राजा भारहमल्ल (भारमल) बड़ा ही प्रशंसावाला है। उसको उस सम्राट्,(बादशाह) ने सम्मान पूर्वक बुलाया (सम्मान किया) ।।७०।।

वह सूर्यवंशोद्भूत राजा तेजस्वी है। अपनी सेना के समेत वह उसकी सेवा में समुपस्थित हुआ। तब उसने (बादशाह ने) उसको सम्मानित किया और उसके साथ संबंध भी स्थापित किया ।।७१।।

---

१. यद्यद्विभूतिमत्सत्वं श्रीमदूर्जितमेव वा ।
तत्तदेवावगच्छत्व मम तेजोंऽशसंभवम् ।। भगवद्गीता, अ. 10 श्लो. 41

२. रि। ३. सम्मानयामास।

---

1. सतान्दिदेश।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

स पातसाहः श्रुतमानतेजाः
सस्मार तं दिग्विजाय[1] वीरम् ।
संस्मृत्य विष्णुप्रभवांशभूत-
स्तमाह्वयामीति मनश्चकार ।।७२।।

दिशोजिगी धर्महतां[2] समृद्धचै
श्रीपातिसाहोऽतिहितैर्मनुष्यैः ।
तमाह्वयामास स मानसिंहं
विज्ञाय विज्ञान[3]दशा [1]सखायम् ।।७३।।

बलेन रूपेण गुणेन योग्यो
यदाभवद्भूमिपतेस्तनूजः[4] ।
तदा प्रतस्थे सुबलैरनेकै-
रकब्बरस्यान्तिकमुग्रतेजाः ।।७४।।

प्रस्थानकालो जगतां हिताय
श्री मानसिंहस्य यदा बभूव ।
तदा धरामन्यत कार्यसिद्धिं
शुद्धा कृतेः प्रस्थितिमेव तस्य ।।७५।।

उस बादशाह ने, जिसने उसके मान और तेज की महिमा सुन रखी थी, उस वीर को दिग्विजय करने के लिए स्मरण किया। यह विचार कर कि यह विष्णु का अंश स्वरूप है तो मैं इसे बुलाता हूँ ऐसा उसने मन में निश्चय किया ।।७२।।

श्री बादशाह (पातिसाहो) ने अपने अत्यंत हितेच्छुओं द्वारा दिशाओं को जीतने का इच्छुक और धर्महतों (जिनके धर्माचरण में बाधा हुई थी) क समृद्धि के लिये अपनी स्थिति का अवलोकन कर उस मानसिंह को सखा भाव से (मित्ररूप से) बुलाया ।।७३।।

जब वह राजकुमार (मानसिंह) बल, रूप और गुणों से योग्य हो गया तब वह महान् तेजस्वी अनेक (बहुत) सेना साथ लेकर अकबर के समीप प्रस्थापित हुआ ।।७४।।

जब मानसिंह का यह प्रस्थान काल जगत् के हित के लिये समुपस्थित हुआ तब पृथ्वी ने भी समझ लिया कि अब कार्य की सिद्धि निश्चित है अतः उसका यह प्रस्थान विशुद्ध और पवित्र ही है ।।७५।।

---

१ दशां ।

---

1. दिग्विजयाय 2. जिगीषुर्महतां 3. दृशा 4. भवद्भूमिपतेः ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पत्रांक २१ ब

जगज्जिगीषोः किमकब्बरस्य
यशस्सरः खेलनराजहंसम् ।
पुरः प्रयाने (णे) नृपमानसिंहं
महानुकूलः पवनः सिषेवे ॥७६॥
महोग्रयोधा बलिजातसंग-
स्तुरंगमातंग घटास वंशः ।
उद्यत्पताकप्रतिपन्ननाक-
स्तदन्तिकं प्राप दिनैः कियद्भिः ॥७७॥
प्राप्तं पुरः प्रेक्ष्य स पातिसाह-
स्तम्मानदानादिभिरर्च्चयित्वा ।
सर्वोऽपविस्यादिह मानसिंह-
स्तथा विधास्यामितरां[1] त्वराभिः ॥७८॥
धर्मपुत्रं करिष्यामि येनायं प्रथितो भवेत् ।
इति चित्ते समाधाय चकार सुकृती तथा ॥७९॥
मानसिंह ! मम धर्मसंभवः
सूनुरस्यतुल वीर विक्रमः ।
[2]किंतु संति यदनेकसंपद-
स्तत्तवैव स तनूजिवानिति ॥८०॥

जगत् को जीतने की इच्छावाले अकबर के यशरूपी सरोवर में क्रीड़ा करने (विहार करने) वाले मानसिंह रूपी इस राजहंस को आगे प्रयाण कराने के लिये महान् अनुकूल होकर वायु ने भी सेवा की ॥७६॥

वह महान योद्धा (मानसिंह) बलशाली चपल तुरंगों और उन्मत्त मतंगों के समूह के साथ (गगनचुम्बी उन्नत फहराती पताका वाला) कुछ ही दिनों में उसकी सेवा में पहुंच गया ॥७७॥

बादशाह ने उसे अपने सन्मुख प्राप्त हुए देखकर सम्मान और उपहार से उसकी अर्चना (आदर) की । उसी प्रकार मानसिंह ने भी सब छोड़कर यह कार्य शीघ्रता से सम्पन्न करूंगा (ऐसा कहा) ॥७८॥

मैं इसे (मानसिंह) अपना धर्मपुत्र बनाऊंगा जिससे यह (जगत् में) प्रसिद्ध हो जाय ऐसा चित्त में धारकर उस पुण्यात्मा ने उसी प्रकार यह कार्य किया ॥७९॥

हे मानसिंह ! अब तू मेरा धर्म पुत्र है । तू अतुल बलशाली और शूरवीर है । अब जो भी सम्पत्ति तुझे प्राप्त होगी वह सब तेरी ही होगी ऐसा उसने (बादशाह ने) कहा ॥८०॥

---

1. त्वरां 2. किं तु

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

एवमेवजनसंसदि स्वयम्प्रोक्तवानजित वीर विक्रमम् ।
सम्भवन्तु ममयोधकोटयस्त्वामुदारगुणवृन्दसिंधवः ।।८१।।

सोऽपि सर्व कृतिविज्ञविग्रहः मेवया[1]ऽस्य कति वासवं नयन् ।
इङ्गितज्ञ पदवीं क्रमादगात् को ण[2] विन्दति यशः सुशीतलः ।।८२।।

पत्रांक २२ अ

लोकैस्तदा स विदितो निखिलैरितीहक्[1]
तस्याप्रियो[3] जगति कोऽपि न दृश्यतेऽत्र
लोकानपि स्वगुणसंचयसंभ्रमेण
प्रातोषयद्रविण[2] दानपुरस्सरेण ।।८३।।

लोकैरपि स विज्ञाते नेदृक् गम्य प्रियो परः ।
राजापि रंजयामास लोको[4]स्तु गुणसम्पदा ।।८४।।

इसी प्रकार उसने स्वयं ने भरी सभा में उस अजेय विक्रमशाली वीर से कहा । मेरी यह अपार सेना, उदार गुणों के समुद्र, तेरे ही अधीन रहेगी ।।८१।।

सब कुछ करने का ज्ञान रखने वाले तथा संकेत को समझने वाले उसने भी कितनी ही वासवी (इन्द्र की) सेना को लाता हुआ क्रम से उन्नत पद को प्राप्त किया । उसके ऐसे सुन्दर यश को कौन नहीं जानता ।।८२।।

इस प्रकार सम्पूर्ण लोक में वह प्रख्यात हुआ । इस जगत् में उसका अप्रिय कोई भी नहीं दीखता । (अथवा इस लोक में उससे अधिक कोई भी प्रिय नहीं दीखता) । संसार को उसने अपने सद्‌गुणों के समूह से तथा धनादि पुरस्कार वितरण करने से संतुष्ट किया ।।८३।।

संसार में वह प्रसिद्ध हुआ । दृष्टि में उससे बढ़कर दूसरा कोई प्रिय नहीं । राजा ने भी सद्‌गुणों और सम्पत्ति से प्रजा को प्रसन्न किया ।।८४।।

---

१. पर्यायवाची-सेवया । २. न । ३. तस्याप्रियो—तस्य + अप्रियो यदि पाठ तस्य प्रियो—ही रखा जाय जैसा कि मूल में है तो-इस जगत् में उसका प्रिय कौन नहीं है अर्थात् सब प्रिय है—इस प्रकार भावार्थ निकलेगा । ४. लोकान् ।

---

1. निखिलैंरितीदृक् 2. प्रोतोषयद्द्रविण

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मथुरातः समारभ्य द्वारक्यमभितः[1] पुरीम् ।
हैन्दवी[2]मृष्टिरस्त्यस्मात्साल्पायासेन जेष्यति ।।८५।।

इति सञ्चिन्त्य मनसा दिग्जयायाजितोऽयमम्[3] ।
मानसिंहमहीपालं दिदेश तमकव्वरः ।।८६।।

यदा यौवनोद्भिन्नतीव्रप्रतापं
नृपं विक्रमाक्रान्तमार्तण्डवीर्यम् ।
तदानेकहस्त्यश्वपादातवृन्दैः[4]
समेतं समाज्ञापयामास देवः ।।८७।।

आज्ञामवाप्य भूपालचक्रपूजितपादुकः ।
श्रीमानसिंहभूपाल इति चित्ते तदा व्यधात् ।।८८।।

वृन्दावने दैवतवृन्दवंद्यं
गोविन्दरायालयमादरेण ।
अहं विधास्ये बत येन भूयः
कृष्णावतारोत्सवसंभ्रमः स्यात् ।।८९।।

मथुरा से (विजय-यात्रा) प्रारम्भ करके द्वारकापुरी के आस-पास (के प्रान्त को) वह भारतीय दुधारी तलवार के सहारे अल्प प्रयास से ही विजय प्राप्त कर लेगा (जीत लेगा) ।।८५।।

ऐसा चित्त में सोच-समझकर अकबर ने दिग्विजय के लिए अजित वीर मानसिंह राजा को आज्ञा प्रदान की ।।८६।।

जब नव यौवन से उद्‌भूत उग्र प्रताप वाले, शौर्य और पराक्रम से युक्त, सूर्य के समान प्रचण्ड तेजस्वी वीर को (जाना) तब बादशाह ने अनेक हाथी, घोड़े और पैदल सेना के साथ आज्ञा प्रदान की ।।८७।।

तब इस प्रकार आज्ञा पाकर अनेक राजाओंद्वारा पादपूजित राजा मानसिंह ने अपने मन में विचार किया ।।८८।।

वृन्दावन में देव समूह से वंदित गोविन्दराय के मन्दिर को सम्मानपूर्वक मैं पुनः स्थापित करूंगा जिससे निश्चिय ही भगवान् श्रीकृष्ण के अवतार के उत्सव का समादर हो ।।८९।।

---

1. द्वारक्यामभितः, 2. सृष्टिः, 3. दिग्जयायाजितोपमम्, 4. पादातिवृन्दैः

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

दत्वा देवनिकेतनं तदनु स क्षोणिपतिस्तत्क्षणात्
सर्वान्स्तान्नगरोकमोऽपि[1] स करांश्चक्रेऽकरान् विक्रमी ।
भूदेवानपरांश्च वृत्तिकलितान्कृत्वा प्रतस्थे कृती
जेतुं जम्भ सयत्न[2] सूनुसदृशः श्रीद्वारकानायकम् ।।६०।।

पत्रांक २२ ब

राजपुत्रान्वशीचक्रे समस्तानिह तान् शृणु ।।६१।।

पुरः कछ[१]वाहोऽस्ति राठौर भाटी
हेडाटाक निर्वाण चौहान खीची ।
सिसोदीपमारः सुलंकी बघेल-
श्चन्देलोऽथगौडस्तथा यादवोऽपि ।।६२।।

परस्तू[3] न्मुरो[२] वएसवंशप्रसूतः[4]
स चैतान्वशीकृत्य राजा प्रतस्थे ।।६३।।

[5]चित्तौरद्वंश[३] रणथं[४]भौरं कुंभलमेरुं त्रितयमिदम् ।
यः स्वजननिवास[6] विलासकृते[५] त(?)नृपतिर्विजिगीषुरगात् ।६४।

जम्भासुर के शत्रु इन्द्र के पुत्र जयन्त के समान द्वारकानायक को जीतने के लिये उस पराक्रमी राजा ने उसी क्षण उसी के अनुसार देवस्थान देकर उस सुवर्णमयी नगरी के सभी करदाताओं को कर से मुक्त कर दिया । ब्राह्मणों को तथा दूसरे अन्य लोगों को उस पुण्यात्मा ने वृत्तियां प्रदान की ।।६०।।

उसने यहां जिन समस्त राजाओं (राजपुत्रों) को अपने वश में कर लिया उसे सुनो ।।६१।।

वे हैं कछवाहा, राठौर, भाटी, हाड़ा, टाक, निर्वाण, चौहान, खीची, सीसोदिया, परमार (पंवार), सोलंकी, बघेल, चन्देल, गौड़, यादव (वंशी) राजपूत भी । कछवाहा सबसे आगे (पुरः) थे ।।६२।।

तोमर और वेस वंश में उत्पन्न इतने इनको अधीन करके उस राजा ने प्रस्थान किया ।।६३।।

अपने स्वजनों के निवास और विलास के लिये चित्तौड़ और रणथम्भौर (दोनों को एक साथ) तथा कुम्भलमेर इन तीनों दुर्गों को जीतने की उत्कण्ठा से राजा (मानसिंह) गया ।।९४।।

---

१. कच्छवाहो (छन्द की दृष्टि से) २. तूमर (तोमर वशं से तात्पर्य है) ३. द्वंद्वश
४. रणथम्भौर ५. कृत—अनावश्यक लिपिक का दोष प्रतीत होता है

---

1. नगरोकसोऽपि 2. सपत्न 3. परस्तून्वरो 4. एपवंशप्रसूतः 5. चित्तौर दुर्ग
6. विलासकृतं

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यत्पूर्वपुरुषा केऽपि[1]नेमुर्क्कं च[2] नलो[१] नृपम् ।
नमति प्रति भूपालं स्वयं दर्पान्नु कंचन ।।९५।।

स दिल्ली पातिसाहे[२] समं युद्धं महोद्धतम् ।
[3]व्यधाद्दुर्गामदर्पौघः क्रुद्धो भास्वत्सुतोपमः ।।९६।।

तमह जेतुमना नृपतिस्स्वयं वरतुरंगस[३]रंगगतिद्युति (:) ।
वरमतङ्गघटाभटकोटिभिर्विरुरुचे रूरूचंचल[४] (ह)लोचनः।।९७।।

श्रीमानसिंहस्य शुभप्रयाणे
[4]वरो समीरः सुखदोनुकूलः ।
चकम्पिरे वैरिगणा समस्ता
[5]न्यस्ताशयास्ते च तदा बभूवुः ।।९८।।

तथैव शंका कुलिताः परेमी
चकम्पिरे भूधरभूसमुद्राः ।
विशिष्य तेषामयमम्बुराशि-
रासीद्दृशं भीतिवशात् सकम्पः ।।९९।।

किन्हीं पूर्व पुरुषों ने सूर्य (विष्णु) और राजा नल को नमन किया था । अपने अभिमानानुसार (वह भी) स्वयं किसी किसी राजा के प्रति नमस्कार करता है ।।९५।।

सूर्य पुत्र (यमराज) के समान क्रोधी और दुर्दमनीय गर्व से युक्त उसने दिल्ली के बादशाह के समान ही उद्धत (प्रबल) युद्ध किया ।।९६।।

उसको जीतने की निश्चय धारणा वाला हरिण के समान चंचल गति वाले सुन्दर घोड़ों से युक्त द्युतिमान् मृग के समान चंचल नेत्र वाला वह राजा श्रेष्ठ हाथियों और अनेक वीरों के साथ विशेष रूप से सुशोभित हुआ ।।९७।। (रूरू-हिरण, विरूरूचे-सुन्दर लगा ।)

श्रीमानसिंह के इस शुभ प्रयाण के समय सुन्दर वायु अनुकूल बहने लगी तब समस्त शत्रुगण कांप उठे और वे ऐश्वर्य से रहित हो गये ।।९८।।

उसी प्रकार से संशयशील होकर (डर कर) वे भाग गये । पर्वत, पृथ्वी और समुद्र डोल उठे, उद्वेलित हो गये । विशेषकर उनकी जलराशि यह समुद्र भय के कारण कम्पित हो उठा और दृश्य (दृशं) भी भयानक हो गया ।।९९।।

---

१. नलं २. पातिसाहेन ३. सारंग ४. ह–व्यर्थ है लिपिक प्रमाद

---

1. नेमुर्मु 2 न कंचन लोक 3. व्यधाद्दुर्गम 4. ववो 5. व्यस्ताशया

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

/पत्रांक २३ अ

एतच्चमूरेणुरगस्त्यवर्त्मा
नमम्बुमापादयितुं समर्थः ।
मनोरथम्पूर्णममुष्य धा[१]–[1]
चित्ते निधाय स तदा स धीरः ।।१००।।

प्रयाणमाकर्ण्य महीश्वरस्य
वैरिप्रियाः प्रेयसीवीतसंगाः ।
बभूवुरुत्सादित[२] चातुर[२]ङ्गाः
भेजुः कुरङ्गा इव काननानि ।।१०१।।

शूरः प्रतस्थेऽरिविदारणाय
समानसिंहस्सहितो बलौघैः ।
तदा जलौघैरिति शंकितोऽभूत्
किमर्जुनः किं पृ|थुरेष भूपः ।।१०२।।

इस भारी सेना से उठी हुई धूल अगस्त्य मुनि के समान समुद्र को जलहीन (पी जाने को) करने को समर्थ हो गई अर्थात् उसे सुखाकर पूर देगी। इस (पुरुष) के सम्पूर्ण मनोरथ चित्त में धार कर वह धीर अपनी स्थिति में हुआ ।।१००।।

महीश्वर (राजा मानसिंह) के विजयार्थ प्रयाण (प्रस्थान) को सुनकर शत्रुओं की प्रियांगनाएं अपने प्रीतमों का संग छुड़ाकर खदेड़ दी गई, आतुर हुई (घबराई गई) और हिरणों के समान वन में भाग गई ।।१०१।।

उस मानसिंह ने सेना के बड़े समूह के साथ शत्रुदल को विदीर्ण करने के लिये प्रस्थान किया। उस समय राज-समाज समुद्र के समान उद्वेलित (शंकित, भयभीत) हो उठा जैसे मानो कि यह सहस्रार्जुन है कि महाराज पृथु है ।।१०२।।

---

१. धार्य २. चातुराङ्गाः

---

1. धातुं 2. चारुरङ्गाः

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

संस्थापयन्निर्जितवैरिवृन्दान्
धर्मानपि स्वच्छतरप्रतापः ।
दीनान्द्विजानप्यथ देवतानां
सद्‌मानि पद्‌मायति रंजितानि ॥१०३॥

रिपुसतामथ देशमशेषतो वशमसावनयन्नयकोविदः ।
नृपतिरेव तदा जगतामभूदनुमतो मुमुदे मुदिताशयः ॥१०४॥

अथाजगामाभिमुखस्तुवद्भि-
जनैर्वृतो धर्मधुरीणमुख्यः ।
तमाह्वयामास महोग्रवीर्यं
राणानृपम्मानमहीमहेन्द्रः ॥१०५॥

उवाच तं वीर ! बहिः प्रयाहि
त्वं पातिसाहं भज सर्वभारैः[1] ।
योद्धुं मतिश्चेद्बहिरेहि तूर्णं
योद्धृभिर्मदीयैः कुरु युद्धमृद्धः ॥१०६॥

शुभ्र प्रताप वाले (महाराज मान) ने जीते हुए शत्रुओं को, धर्म को. दीन दुःखी (स्वधर्माचरण न होने से) ब्राह्मणों को तथा लक्ष्मीपति विष्णु से सुशोभित देवालयों को पुनः स्थापित किए ॥१०३॥

उस नीति विशारद (कोविदः, विद्वान्) राजा ने शत्रुओं के सम्पूर्ण देशों को अपने अधीन कर लिया और उसके पश्चात् तब जगत् में अनुमोदित होकर (सबसे चाहा जाने पर) वह उदाराशय मन में प्रसन्न हुआ ॥१०४॥

धर्म की धुरा को धारण करने वालों में प्रमुख तथा अपने प्रशंसकजनों (सामन्तों) से घिरा हुआ वह राणा के अभिमुख हुआ (सामने हुआ) उस मही महेन्द्र मानसिंह ने उस उग्र वीर राजा राणा को ललकारा (युद्धार्थ आवाहित किया) ॥१०५॥

(मानसिंह) उससे बोला कि हे वीरवर बाहर आओ। अपना सर्वस्व समर्पित कर बादशाह की सेवा करो। यदि युद्ध की ही इच्छा (बुद्धि, मति) है तो शीघ्र ही बाहर आओ और मेरे वीर योद्धाओं के साथ उग्र युद्ध करो ॥१०६॥

---

1. सर्वभारैः वैः

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

/पत्रांक २३ ब

नृपोक्तवाक्यं बहुशो निशम्य
राणा नृपः क्रोधवशादुपेतः ।
हन्तुं महीपालमणिम्प्रकोपा-
द्दण्डाहतस्सर्प इवाजगाम ।।१०७।।

तदीय योधास्सहसा समस्ताः
श्रीमानसिंहोपरि पेतुरुग्राः ।
शरासिशक्रुष्टि[1] गदापरश्वधा-
न्ववर्षुरंभोदगणा इवापः ।।१०८।।

किमुभयो रुरुचै[2]रुचिराचमू-
र्नव[3]वधूरिव भावनयानया ।
तरुणकुंभिगतिः स्फुरदम्बरा
चरणचुम्बितचन्द्रमुखद्विति:[4] ।।१०९।।

तेषां प्रतापम्प्रश[5]मीक्ष्य भूपो
युद्धाय चेताः स्वयमाचकार ।
सिंहो यथा वारणराजमुच्चै-
र्विहन्तुकामः स तथाऽवभासे ।।११०।।

राजा (मानसिंह) के वाक्य को वहुत बार सुनकर राजा राणा (प्रताप-सिंह) क्रोधित हो उठा । महिपालमणि (मानसिंह) को मारने के लिये डण्डे से पीटे हुए (आहत) सर्प के समान कुपित होकर वह वाहर आया ।।१०७।।

उसके सव योद्धागण उग्र रूप धारण कर एकाएक श्रीमानसिंह पर टूट पड़े । वे वर्षा के समान वाण, तलवार, शक्ति, दुधारी-कटार, गदा, फरसा आदि शस्त्रों की वर्षा करने लगे ।।१०८।।

उस समय दोनों ओर की सुन्दर सेनाएँ इस भावना (उमंग) से भरी हुई मद भरे तरुण मतंगों की सी चाल वाली, फहराती हुई साड़ियों (वस्त्र) वाली और चन्द्र के समान काँति मुख वाली नव वधुओं के समान सुन्दर प्रतीत हुई (रूरुचे) (शोभित हुई) ।।१०९।।

उनके (राणा के योद्धाओं के) प्रताप को देखकर राजा-मानसिह ने स्वयं मनमें युद्ध करने का निश्चय किया । वह उस समय ऐसा सुशोभित हो रहा था मानो मृगराज गजराज को उसके मस्तक पर हमलाकर मारने की कामना करता हो ।।११०।।

---

१. शवंतृष्टि-पाठ शुद्ध होता है जो शक्ति+ऋष्टि के योग से सिद्ध होता है । शक्रुष्टि-लिपिक प्रमाद हो सकता है । ऋष्टि-दो धार वाली कटार होती है । २ रूरूचे । ३. नव । ४. द्युतिः । ५. प्रसमीक्ष्य ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

क्षणेन स क्षोणिपतिर्विपक्षा–
न्विद्राव्यतान्दोर्युगलप्रतापैः ।
दैत्यानिवेन्द्रस्सरभौ विजित्य
प्रतापसंतापितवैरिवर्गः ।।१११।।
धनदेन करेण न केवलं
धनदो भूमिपतिर्बभूव ह ।
सुतरामहितापकरेण यः
स न किं गरुडोपमविक्रमः ।।११२।।
वज्रांकितेनैव करेण भूपः
पुरन्दरस्योपमितिं[1] जगाम ।
प्रतापदावानलदग्धवैरि
कक्ष्योऽप्य लक्ष्यो हुतं बभूव[2] ।।११३।।
प्रताप तिङ्भा सरसि त्वमेव
यमोऽसि कोपेन रणाङ्गणेषु ।
एको विधात्रा विहितोऽसि तस्मा–
दीशो दिशः पालयितुम्प्रयत्नात् ।।११४।।

/पत्रांक २४ अ

न स्तोतुमीशोऽस्ति भवन्तमुच्चै–
स्सहस्रजिह्वोऽप्यथ क्रो मनुष्यः ।
एवं व्यर्थ प्रतीत होता है—

एक क्षण मात्र में उस (महाराजा मानसिंह) ने अपनी दोनों भुजाओं के प्रताप से विपक्षियों को खदेड़ दिया । जैसे इन्द्र ने दैत्यों को सहसा (शीघ्रता से) जीता था उसी प्रकार वैरी दल इसके प्रताप से संतापित (घबरा) हो उठा ।।१११।।

वह राजा (मान) हाथों से केवल धन बांटने से ही कुबेर नहीं हुआ अपितु भली प्रकार शत्रुरूपी सूर्य को ताप पहुंचाने के कारण वह गरूड़ के समान (पराक्रमी) भी हुआ ।।११२।।

हाथ वज्र की रेखा से अंकित होने से वह राजा इन्द्र की उपमा से सुशोभित हुआ । उसकी प्रतापरूपी दावाग्नि से जले हुए (नष्ट हुए) शत्रुरूपी सूखे तृण (घास) वत् हो गये ।।११३।।

(पाठान्तर—तुम्हीं प्रतापरूपी सूर्य हो)

रणांगण में तुम सरोवर में जैसे प्रताप रूपी सूर्य की प्रभा हो और कोप के कारण यमराज हो । विधाता के द्वारा तुम अद्वितीय (पुरुष) ही निर्मित हुए हो इसलिये सब दिशाओं को (समस्त भूमि को) प्रयत्न पूर्वक पालन करने में तुम समर्थ हो ।।११४।।

इस पंक्ति के आगे श्लोक में पुनरावृत्ति होगी । सम्भव है लिपिकार के प्रमाद से लिख ली गई हों ।

१. मितं । २. इस पंक्ति में छंदो भंग है ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

भ्रमरहितमुदार[1] हृत्सरोजं नृपस्य
स्फुरति नियतमेव यत्र कृष्णाङ्घ्रियुग्मम् ।
बलिदमनविधौ (यद्) भूतले नो ममो खे
तदनु तवम[2] पि स्याद् केन तन्नैव जाने ।।११५।।

न स्तोतुमीशोऽस्ति भवन्तमुच्चै
स्सहस्रजिह्वोऽप्यथ को मनुष्यः ।
एवं स्तुतो दिक्तरुणीभिरीषद्
वहत्समीरस्य मिषान्महीशः ।।११६।।

एवं रणे युध्यति मानसिंहे
[1]समागते[3] माधवसिंहवीरः ।
विश्रम्यतां क्षोणिपते क्षणान्नः
[2]तं दृश्यतां (?) युद्धमिदं जगाद ।।११७।।

इतीरयित्वाऽभिमुखो रणाग्रे
व्यग्रान्समग्रान्विदधेऽरियोधान् ।
तदा न युद्धा (य) पुरो बभूवुः
केचिद्भ्र यात्तस्य परिस्खलन्तः ।।११८।।

राजा के भ्रम रहित (अथवा भ्रमरों प्रशंसकों का हितरूप उदार रूपी कमल) हृदय रूपी कमल में, जो उदार (सुन्दर) है, श्रीकृष्ण के चरण युगल नियती रूप से (निरन्तर) स्फुरित होते रहते हैं । अर्थात् कृष्ण भक्ति से परिपूर्ण है । (जिस चरण ने) वली राजा के दमन करने में भूतल ही नहीं आकाश तक को नाप लिया था उस शक्ति का अंश रूप (तू) भी किसी से नहीं जाना जा सकता ।।११५।।

सहस्र जिह्वा वाले (शेष भगवान्) भी आपकी स्तुति करने में समर्थ नहीं हैं (तो फिर) मनुष्य की क्या शक्ति । इस प्रकार वायु के बहने के मिस (वहाने) मानो महीपति (मानसिंह) दिशारूपो तरुणियों द्वारा स्तुति किये गये ।।११६।।

इस प्रकार जब मानसिंह युद्ध कर रहा था उसी समय माधवसिंह वहां आ पहुंचा । वह बोला हे राजन् ! अब कुछ समय के लिये आप विश्राम करें और अब हमारा युद्ध देखें ।।११७।।

ऐसा कह कर वह (माधवसिंह) युद्ध में आगे बढ़कर सम्मुख हो गया और शत्रु वीरों को व्यग्र करने लगा । तब उसके भय (आतंक) से लड़खड़ाते हुए शत्रुओं में से कोई भी युद्ध के लिए सामने नहीं हुआ (आया) ।।११८।।

---

१ मुदारं । २. तवसमापि शक्ति) । ३. समागतो ।

1. समागतो । 2. तद् ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तद्बाणभिन्ना बहुशो विपन्ना
दीना बभूवुः कति भूमिपालाः ।
केचिद्विहायाजिमहीम्प्रतस्थे[1]
स्तस्थ[2]श्चिरङ्कंचन योद्धुकामाः ।।११६।।

निशेव तद्वासरमास युद्धे
गतेऽस्त भावन्तदरातिमित्रे ।
संकोचिते तत्तरुणीमुखाब्जे
स माधवेन्दुस्सहसोद्दिदीपे ।।१२०।।

/पत्रांक २४ ब

उद्दीपिते माधवसिंह चन्द्रे
तमांसि तत्रोसु[3]रमी प्रतीपाः ।
तत्पक्षभाजां वदनानि रेजुः
कुमुद्वतीनामिव काननानि ।।१२१।।

राणा तदा दुर्मदवीरवीर्यो
दुर्योधनायास्य पुरो बभूव ।
सकर्ण कल्पोऽर्जुन कल्पवीर्यः
विजेतुकामः परूषं जगाद ।।१२२।।

कई राजा लोग उसके (तीखे) बाणों से छिद गये और बहुत व्याकुल होकर दीन भाव को प्राप्त हो गये । कई तो युद्ध भूमि को छोड़ कर भाग खड़े हुए और कुछेक युद्ध की इच्छा वाले कुछ अधिक काल तक टिके रहे ।।११६।।

युद्धकाल में वह दिन रात्रि के समान हो गया । शत्रुरूपी मित्र (सूर्य) के अस्त होने पर (पराजित होने पर) शत्रु नारियों के मुखरूपी कमल सम्पुटित (संकुचित, म्लान पड़ने पर) होने पर वह माधवसिंह रूपी चन्द्रमा सहसा प्रकाशित हो गया । (काव्यगत शोभा दर्शनीय है) ।।१२०।।

माधवसिंह रूपी चन्द्रमा के प्रकाशित होने पर ये प्रतिपक्षी (शत्रु) अन्धकार (रूप) हो गये । तथा उस (स्व) पक्ष वालों के मुख कुमोदिनी के वन के समान प्रफुल्लित होकर सुशोभित हुए ।।१२१।।

तब दुर्मद (भयंकर) वीरता से युक्त राणा इस दुर्योधन के लिये (अथवा कठोर दुर्गम युद्ध के लिये) अभिमुख हुआ वह राणा कर्ण वीर के तुल्य माधवसिंह रूपी वीर अर्जुन को जीतने की कामना से कठोर वचन बोला ।।१२२।।

---

१. प्रतस्थुः । २. तस्थुः । ३. तत्रासु ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यत्त्वं रणे माधवसिंह ! वीरान्
बलेन विद्राव्य मुदम्बिधत्से ।
क्षणेन तत् क्ष्मापतिना[1] समेत
मुदा विहीनं सहसा विधास्ये ।।१२३।।

राणानृपे जीवति या जिगीषा
यूनोर्वृथा सा भवतोरुपेता[1] ।
युवां विजानीतमिदं मदुक्तं
सत्यं सपे[2] विष्णुपदारविन्दम् ।।१२४।।

इतीरयन्बाणशतेन वीर–
स्संछादयामास स तौ प्रकोपात् ।
छन्नं पुनर्वासरमास युद्धे
रुद्धं तथाऽभूद्गगनं शरोघैः ।।१२५।।

कि—

हे माधवसिंह ! युद्ध में (मेरे) वीरों को बलपूर्वक तितर बितर करके मनमें प्रसन्न हो रहा । अब (देख) क्षण भर में मैं तुझे राजा (मानसिंह) के समेत शीघ्र ही प्रसन्नता से रहित बना दूंगा ।।१२३।।

महाराणा के जीवित रहते तुम दोनों युवकों की विजयी होने की वह इच्छा (सर्वथा) व्यर्थ है । तुम दोनों ही मेरे इस कथन को भली प्रकार समझ-लो (जानलो) । (यह) मैं विष्णु भगवान् के चरण कमल की शपथ लेता हूं । ।।१२४।।

इस प्रकार कहकर उस वीर ने कुपित होकर सैंकड़ों बाणों से उन दोनों (माधवसिंह, मानसिंह) को ढँक दिया । उस युद्ध में दिन (अन्धकार से) छा गया और आकाश (मंडल) भी बाण समूह से अवरुद्ध (ढँक)हो गया ।।१२५।।

---

१. मानसिंह और अकबर दोनों के लिये यह अर्थ संगत होता है, किन्तु मानसिंह अर्थ ही अधिक संगत है क्योंकि ऊपर श्लोक 117 में माधवसिंह ने कहा है "विश्रम्यतां क्षोणिपते क्षणन्नः", जो मानसिंह को ही सम्बोधित हुआ है । २. शपे ।

---

1. भवते उपेता ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

आदौ गजेनैव गजो नियुक्त–
स्तुरंगमेनैव तुरङ्गमोऽपि ।
पदातिना पत्तिरथ व्ययुद्ध[1]
समस्तदासीदुभयोः प्रयोगः ।।१२६।।

एवं प्रवृत्ते गुरुसंगरेऽस्मिन्
विसिस्मिरे[2] दैवतमण्डलानि ।
शस्त्रांधकारे गहने प्रवीरा
भेजुर्भयछन्नमनः[3] शरीराः ।।१२७।।

/पत्रांक २५ अ

यस्संमुखे यस्य पपात वीरः
स तं जघान स्वपरे न भेदः[१] ।
बाणा[२] चमूर्बाणविभिन्नदेहा
भेजे विदेहा विदिशो दिशोऽपि ।।१२८।।

प्रारम्भ में (सर्वप्रथम) हाथी से हाथी भिड़े, घोड़ों से घोड़े और पैदल का पैदल सेना से तुमुल युद्ध हुआ । इस प्रकार दोनों ओर से समान युद्ध का प्रयोग हुआ ।।१२६।।

इस प्रकार इस तुमुल युद्ध में देव समूह भी आश्चर्यान्वित हो गया । अस्त्र-शस्त्रों के द्वारा जो गहन अन्धकार छा गया था उससे उद्विग्नमन होकर क्षत-विक्षत शरीरी वीर लोग (युद्ध भूमि से) भाग खड़े हुए ।।१२७।।

जिस वीर के सामने जो भी दूसरा वीर आ गया वह वहीं धराशायी हो गया । अपने पराये (स्वपक्ष-परपक्ष) का भेद न रखते हुए उसने उसको मार डाला । (राणा की) सेना से छोड़े गये बाणों से छिन्न-भिन्न देह वाले अपनी देह का भान भूल कर दिशा विदिशा में भागने लगे ।।१२८।।

---

१ ऐसा ही वर्णन बदायूं के द्वारा हल्दीघाटी के युद्ध की घटना के समय मिलता है— "इस समय मैं (अल् बदायूनी) ने, जो कि हरावल के खास सैन्य के साथ था, आसफ खां से पूछा कि ऐसी अवस्था में हम अपने और शत्रु के राजपूतों की पहचान कैसे कर सकें ; उसने उत्तर दिया कि तुम तो तीर चलाये जाओ; चाहे किस पक्ष के आदमी मारे जावें, इस्लाम को तो उससे लाभ ही होगा ।"

ओझा, उदयपुर का इतिहास पहली जिल्द, पृष्ठ 433-434

२. राणा ।

---

1. व्ययुद्ध्यन् । 2. विसस्मिरे । 3. भेजुर्भयाछन्नमनः ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

राणा नृपो बाणशतेन भूप–
मूरं स जीमूत इवारुरोध ।
तद्बाणसंछन्नतनुः स घन्नी[1]
तद्योद्धुकामः पुरतो बभूव ।।१२९।।

तद्बाणसंभूतघनान्धकारं
व्याधूय भास्वानिव मानसिंहः ।
बभौ रणक्षोणिमुखे रिपूना[2]
[1]मपेक्षणीयो धरणीधुरीणः ।।१३०।।

यतो यतो युध्यति दन्तिराजी
[2]तस्ततो युध्यति मानसिंहः ।
सादी तथा पत्तिरथाप्ययुध्यत
युद्धे तदासीद्द्विषता स लक्ष्यः ।।१३१।।

खड्गेन भिन्ना करिणो निपेतुः
शरेण नूनाः[3] परसादिनोऽपि ।
पदातयोऽमी तरसा भयेन
पेतुर्महीपालमणेरमुष्य ।।१३२।।

जैसे बरसते हुए बादल अवरोध (रूकावट, बाधा) उत्पन्न कर देते हैं उसी प्रकार महाराणा ने सैंकड़ों बाणों से राजा (मान) को रोक दिया । उसके बाणों से छिदा हुआ वह धनुर्धारी युद्धेच्छा से सामने आ डटा ।।१२९।।

उसके (राणा के) बाणों से उद्भूत घनान्धकार को सूर्य के समान दूर कर राजाओं में श्रेष्ठ शत्रुओं द्वारा भी अपेक्षित (चाहा हुआ) वह मानसिंह युद्ध में आ खड़ा हुआ ।।१३०।।

जहाँ जहाँ हाथियों की भिड़न्त होती थी वहाँ वहाँ मानसिंह भी भिड़ जाता था । अश्वारोही और पैदल सेना भी युद्ध में जूझ रही थी । उस समय युद्ध में विष (जहर) भाव वैर ही व्याप्त था और लक्ष्य भी यही था ।।१३१।।

शरों से विद्ध, फरसादि से कटे हुए और तलवारों से घायल (छिदे हुए) हाथ भूमि पर गिर गये । इस भूपाल मुकुटमणि के पैदल सैनिक भी उसके बल पराक्रम और भय से धराशायी हो गये (गिर पड़े) ।।१३२।।

---

१ धन्वी ।   २. रिपूणाम् ।   ३. लूनाः ।

---

1. संप्रेक्षणीयो ।   2. ततस्ततो ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

एवं नृपे युध्यति मानिसहे
प्रतापसंतापितवैरिसंघे ।
[1]अवाति योधा विगतप्रकोपा
भेजुर्भयात्तु विदिशो दिशोऽपि ।।१३३।।

संयुध्यतां तत्र महाभटाना–
मसृङ्नदी प्रादुरभूदुदारा ।
परासु मातङ्गमहाद्रिकूला
केशेन शैवालवती विरेजे[१] ।।१३४।।

भयावहा भीरुजनावलीना–
मानन्ददा सद्भटमंडलीनाम् ।
चकार [2]वीर्येन नदीर्नदीनां
स मानसिंहो जितमानसिंहः ।।१३५।।

/पत्रांक २५ ब

इस प्रकार मानसिंह के युद्ध करने तथा अपने प्रताप (तेज, आंतक) से वैरीदल के संतापित होने से वे वीर शत्रु योद्धा क्रोध शून्य (निरुत्साह) होकर भय के कारण दिशा विदिशा में भाग गये ।।१३३।।

वहाँ (रणांगन में) युद्ध में जूझते हुए महा महा वीरों के (शरीर से बहे हुए) रक्त की बड़ी विकराल नदी वह निकली । वह नदी मरे हुए हाथियों से तटवर्ती पर्वत तथा मृत वीरों के केश से शैवाल (सिबार घास) से युक्त हुई जैसी लग रही थी ।।१३४।।

भीरू (डरपोक) लोगों के लिये वह (नदी) बड़ी भयानक थी किन्तु वीर दल को वह आनन्द देने वाली थी । मान रूपी सिंह को जीतने वाले उस मानसिंह ने अपने बलवीर्य से उस (नदी) को नदियों में श्रेष्ठ बना दिया ।
।।१३५।।

---

१ रण नदी का वीभत्स रस पूर्ण रूपक वाल्मीकि, श्रीमदभागवत तथा कई अन्य काव्य-ग्रन्थों में भी उपलब्ध होता है । श्री रामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदासजी ने रोचक वर्णन किया है—

कादर भयंकर रूधिर सरिता चली परम अपावनी ।
दोउ कूल दल रथ रेत चक्र अवर्त बहति भयावनी ।।
जल जन्तु गज पदचर तुरग खर विविध वाहन को गने ।
सर सक्ति तोमर सर्प चाप तरंग चर्म कमठ घने ।।
वीर परहिं जनु तीरतरु मज्जा बहु बह फेन ।
कादर देखि डरहिं तहँ सुभटन्ह के मन चैन ।।

रामचरितमानस, लंकाकाण्ड, दोहा 87

---

1. अराति ।   2. वीर्येण ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

देशे निराशो विजये तथाऽभू–
द्राणा नृपो विद्रुतसर्वगर्वः ।
रणे प्रयातुं तरुणे सचेत–
श्चक्रे समुद्भ्रान्त गतिक्रमेण ।।१३६।।

हृत[1]गतिरतिवेगादासवा[2]णानृपोऽपि
द्विमुख इव स पश्यन् [1]पृष्ठदेश[3] पुरोऽपि ।
नरपतिरपि रोषाद्धावमानोऽस्य पश्चा–
दसुरहितमिवैनं त्रस्तमेकं मुमोच ।।१३७।।

रणशिरसि रिपूणां मृत्युरेवास्ति कीर्त्यै
नरपतिकुलभाजां क्ष्माभुजन्नैष[2] पण्डाः ।
समरभुवि जितानां वैरिभूपावलीनां
प्रणतिमतिबहुज्ञा कीर्तये कीर्तयन्ति ।।१३८।।

देश और विजय से निराश, गर्व से विहीन, चंचल गति वाला (उद्वेग से युक्त) पुनः ताजा होकर वह (राणा) युद्ध के लिये सचेत (सावधान) हुआ ।।१३६।।

राणा भी मानों दो मुखवाला होकर आगे और पीछे देखता हुआ अति वेग से हृत गति (कुण्ठित गति) वाला हो गया। राजा (मानसिंह) बड़े क्रोध से इसके पीछे भागा (पीछा किया), इस (राणा) को अकेला प्राण रहित जैसा (मृत) जानकर और संत्रस्त समझकर इसने छोड़ दिया ।।१३७।।
(अर्थाथ् सेना को या तो मार डाला या अधीन कर लिया)

युद्धभूमि में शत्रुओं के मारने में ही राजाओं की कीर्ति है। राजकुलवन्तो के लिये केवल पृथ्वी के उपभोग में ही कोई बुद्धिमत्ता नहीं है किन्तु रण-क्षेत्र में जीते गये राज समूहों द्वारा किये गये प्रणाम ही उनके सम्मान और कीर्ति के प्रमुख अंग हैं ।।१३८।।

---

१ द्रुत गतिः। यदि यह पाठ पढ़ा जाय तो "तीव्र (तेज) गतिवाला" अर्थ होगा।
२. राणा।   ३. पृष्ठ देशे।

---

1. पृष्ठदेश।   2. नैवषण्डाः।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

श्रीमानसिंहभुजचण्डमरीचिदग्धा
केचिन्निपेतु[१] रजनीपतयोऽम्बराशौ[1] ।
द्वन्द्वं च केचिद[2]पहानिकुंजमीयुः
केचित्तदीयपदपल्लवमीयुरार्त्ताः ।।१३९।।

[२]मेल्लग्नानृपतेर्बभूवु रथ ये तीक्ष्णासिधारापथे
ते स्वर्वामविलोचनारतिरसोल्लासास्पदं शक्त[३] वः ।
उद्यत्तिग्मकरप्रतापदहनज्वालाकरालस्य ये
खड्गस्यासुरसंमुखा रणमुखे ते शूनिला भूमिपाः ।।१४०।।

/पत्रांक २६ अ

इत्थं देश[3]मशेषलोऽस्य तनयान्दुर्गान्वशं नीतवान्
धर्मानप्यवनीपतीन्द्रतिलकस्संस्था[४]— दानपि ।
भूदेवानथ देववृन्दसदनं प्रोन्मूलिता—नापुरी
नैवं कर्म सुदुष्करं सुकृतवान् जित्वा परान्वैरिणः ।।१४१।।

श्री मानसिंह की भुजा (रूपी सूर्य) की प्रचण्ड किरणों से दग्ध हुए कई राजा आकाश से गिरे हुए चन्द्रमा के समान (कांतिहीन) हो गये। कइयों ने युद्ध छोड़ भागकर वन की शरण ली और कई दुःखी होकर उसके चरणों के आश्रित हुए ।।१३९।।

जो राजा लोग द्वन्द्व युद्ध में इस राजा (मानसिंह) की तेज तलवार के धारा पथ में (सामने) आये (अर्थात् मारे गये) वे स्वर्ग की अप्सराओं के साथ रति विलास (सुख भोग) करने में समर्थ हुए। और जो रण में उगते हुए सूर्य के प्रचण्ड ताप की ज्वाला के समान कराल खड्ग के सम्मुख नहीं आये (विमुख हो गये) वे अधीन कर लिये गये ।।१४०।।

इस प्रकार इसके (राणा के) सम्पूर्ण देश को तथा पुत्र और किलों को वह (मानसिंह) अपने अधिकार में ले आया। उस राजाधिराज (नृप तिलक) ने धर्म की स्थापना की तथा ब्राह्मण और पुरी समेत देवस्थान, जो उन्मूलित (नष्ट भ्रष्ट) कर दिये गये थे उन्हें फिर से बसाये व स्थापित किये। इस प्रकार ऐसे दुष्कर कार्य को भी वैरियों को जीत कर किसी ने भली प्रकार संपादित नहीं किया ।।१४१।।

---

१. तू। २. संलग्ना। ३. शक्नुवः। ४. संस्थाप्य; इस श्लोक 141 की दूसरी और तीसरी पंक्तियों के अन्तिम शक्नुवा अंश में व्याकरण दोष लिपिकार से हुआ होगा।

---

1. अम्बुरासो। 2. अपहाय 3. देशमशेषतो।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

काचित्कुंभलमेरुकाननदरीद्वारिद्विषण्मंडली[1]
पश्यन्ती नृपतेः प्रतापदह[2]नं ज्वालावलीढत्विषः ।
हित्वा[3] तत्परिधानभूर्जवसनं जाता कुलीनापि सा
दिग्वासाः किमहो महोन्नतिहृदःकोपोऽपि लोकोत्तरः ।।१४२।।

जित्वा राणा नृपतिमजयद्गूर्ज्जरान्मालवीयान्
वैदर्भांस्तान् द्रविडमलयद्वारकानूप[1]भूपान् ।
तानाज्ञाप्य प्रभुपद[4]तलाङ्कल्पयित्वा गृहीत्वा
दण्डं चोपायनमपि नृपश्चेतसाऽसौ ननन्द ।।१४३।।

त्रस्तोऽसौ गिरिकन्दरे प्रतिदिनं[5] भूमिपतिर्वेदरः
कम्पेनाकुलितस्तथैव मलयः पांथोऽपि दण्ड्योऽभवत् ।
सामन्ताः सकलो बभूव विकलो दूरातिदूरङ्गतः
सर्वेषामतिदुस्सहो[6] भुजमहः श्रीमानसिंहप्रभोः ।।१४४।।

शत्रुओं का कोई दल कुम्भलेर के जंगल स्थित गिरि-कंदरा के द्वार पर छिपा था और कोई दल उस तेजस्वी राजा के प्रताप रूपी दावानल की ज्वाला से झुलस गया, तथा अपने बहुमूल्य परिधानों (वस्त्रों) का त्याग कर उन्होंने कुलीन होते हुए भी भोजपत्र के वस्त्र धारण किये अथवा दिग्वास (दिगम्बर) नग्न हो गये। आश्चर्य है कि उन्नत हृदय वालों का कोप भी लोकोत्तर (असाधारण) होता है ।।१४२।।

राजा राणा को जीत कर फिर गुर्जरों, मालवीयों, वेदर्भियों, द्रविड़ों, मलय, द्वारका और अनूप देश के राजाओं को जीत कर उन्हें आज्ञा देकर तथा बादशाह के चरणों में लाकर और उनसे दण्ड व भेंट लेकर वह राजा (मानसिंह) चित्त में बहुत प्रसन्न हुआ ।।१४३।।

वह वेदर (बीदर) का राजा गिरि गुफा में भी प्रतिदिन भयभीत रहता था। उसी प्रकार मलयराज भी व्याकुल होकर कांपने लगा। पथिक भी दण्ड (राहदारी, पथकर) देने को बाध्य हुआ। सब सामन्त लोग भी व्याकुल होकर दूर से दूर चले गये। श्री मानसिंह प्रभु की विशाल भुजा सबके लिये दुःसह हो गई अर्थात् उसके भुजबल से सब पराजय को प्राप्त हुए ।।१४४।।

---

१. बह्वम्बुर्बहु वृक्षश्च वातश्लेष्माऽऽमयान्विता ।
देशोऽनूप इति ख्यातः शास्त्रेषु च मनीषिभिः ।।

यह देश विन्ध्य पर्वत के निकट (पुराणों के अनुसार) और नर्मदा नदी के उत्तरी तटवर्ती (रघुवंश के अनुसार) है। इसकी राजधानी महिष्मती नगरी (वर्तमान महेश्वर) थी। ओझा निबन्ध संग्रह, प्रथम भाग, पृष्ठ २

---

1 द्विषन्मण्डली। 2. दहनज्वाला। 3. हत्वा। 4. तलं कल्पयित्वा। 5 भूमेः। 6 दुस्सहं।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पत्रांक २६ ब

सौराष्ट्रास्त्यक्तराष्ट्रा जलनिधिसविधे
मुक्तवामास्तु यामाः
तेलंगा जातभंगा परमभययुता
द्वारकायाः[1] महीपाः ।
चोलास्त्रा[2]सातिलोला विविशुरथ
हठादन्तरीपं समीपं
मानेन्ये चत्क[3]मनि[1] हृदि दधतिभिया
वैरता देवतानि ।।१४५।।

उत्सार्य भूपाल[2]तिहृद्यरूपान् राजा रणक्षोणिषु लक्षमूर्ति :
उत्थाप्य तानेव पुनः कृपाभिरारोपयामास निवासभूमौ ।
धन्यानथान्यानपिराजपुत्रान् जित्वा पदेस्थापितवान्नरेन्द्रः
धर्मोऽपि शर्मप्रद आश[4] लोके शोकेन हीना मनुजा बभूवुः ।।१४६।।

सौराष्ट्रवासी राष्ट्रहीन हो गये। समुद्र के समीप उनकी रातें बिना पत्नियों के (सूनी) हो गई। तेलंगी लोग भी तितर बितर हो गये। द्वारका प्रदेश के राजा भय से आक्रांत हो गये। चोल लोग त्रास से उद्विग्न हो गये। (माने) मानसिंह के वर्तमान होने पर अन्य राजा लोग हृदय में आश्चर्य चकित हो गये और देवताओं ने भय के कारण वैरभाव (निर्बलों के साथ) धारण कर लिया ।।१४५।।

युद्ध भूमि में अनेक रूपधारी (लक्षमूर्ति) राजा मानसिंह ने बड़े ही मनोहारी रूपवाले राजाओं को हराकर, उखाड़कर भी कृपा करके उन्हीं को पुनः अपने अपने राज्यों में स्थापित कर दिया। राजा (मानसिंह) ने अन्य राजपुत्रों (राजाओं) को भी जीतकर अपने पदों पर पुनः स्थापित कर उन्हें धन्य किया। जगत् धर्म भी सबको सुखकारी हो गया और सब मानव शोक रहित अर्थात् सुखी हो गये ।।१४६।।

---

१. मान्येऽन्ये च म त्क मनि (च म त्कृ ति) पद सम्भव हो। २. भूपानति।

---

1. द्वारकायां। 2. स्त्रताति। 3. माने न्यंचत्कमाने। 4. आशु।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

जितावनीपाल[1] पिवृत्तिभाज–
कृत्वा सधर्मानपिशोकपूगान् ।
अकब्बरस्यानुमतान्प्रपन्नान्
सेवापरांस्तान्नृपतिश्चकार ।।१४७।।

वृत्ति तथा तद्द्विगुणाममीषा–
मीषत्कटाक्षेन तदा विधाय ।
महीभृताम्पक्षपरिक्षयेण
बभौ सहस्राक्ष इव क्षितीन्द्रः ।।१४८।।

एवं तदारभ्य न केऽपि लोकाः
शोकाकुलानाम्वर धर्मशीलाः ।
धर्मात्स्वकीयात् न विचेन्वरीषद्[1]
[2]वर्णाश्रमाभूमिपतेर्भयेन ।।१४९।।

सर्वे तदाकब्बरपातिसाहं
विज्ञातवन्तोंशजमीश्वरस्य ।
जिष्णुर्युवाऽजानुकरः कृपानु[2]–
रीदृग्विधस्तस्यवशे यदास्ते ।।१५०।।

राजा मानसिंह ने शोकपुञ्ज से आकुल जीते हुए समान धर्मवाले राजाओं को वृत्तियों के योग्य (भागी) बनाकर बादशाह अकबर की अनुमति से शरणापन्न करके सेवा में लगाया ।।१४७।।

थोड़ी सी कृपा कटाक्ष से इन लोगों की वृत्ति को (आजीविका) दुगुनी करके इनके (राजाओं) पक्ष को निर्बल (नष्ट) कर वह क्षितीन्द्र (बादशाह अकबर) सहस्राक्ष अर्थात् इन्द्र के समान हो गया ।।१४८।।

इस प्रकार उस समय जब राज्यारम्भ हुआ तब कोई भी (व्यक्ति) व्याकुल नहीं रहा और न कोई वस्त्रहीन रहा । राजा के भय (प्रभाव) से वर्णाश्रमी कोई भी अपने स्वधर्म पालन से जरा भी नहीं हटा (विचलित हुआ). (अर्थात् धार्मिक स्वतन्त्रता प्राप्त हो गई) ।।१४९।।

तब सभी ने अकबर बादशाह को ईश्वर का अंश जाना (माना, समझा) वह जय की इच्छावाला युवा है, आजानु लम्बी भुजावाला है और कृपालु है ऐसा उसे जानकर सब उसके अधीन हो गये ।।१५०।।

---

१. पानपि २. कृपालु ।

---

1. विचेलुरीषद् । 2. वर्णाश्रमाद् भूमि ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पत्रांक २७ अ–

अतस्तदावद्भूच्[1] जना[2] जगत्या–
मकव्वरं विष्णुमिवव्यमंसत् ।
तं चापि संचारितबाहुवीर्य–
मिवार्जुनंतर्ज्जितभानुवीर्यम् ॥१५१॥

रणशिरसि समस्तारातिचक्रं विजित्य
प्रभुचरणसमीपं कर्णकामो जयिष्णुः ।
इति नृपतिवरोऽसौ मानसिंह[1]स्वकीर्त्या ।
भुवनमिदमुदारं [3]पोतयन्नाव[2] भासे ॥१५२॥

एतस्मिन्समये समीरविचलत् कल्लोलया सद्गिरा
राजानं विनयादिदं स ज(ल)धिर्व्याचष्ट हृष्टाकृतिम् ।
हे रत्नाकर योऽभवदजमहो जातो यशश्चन्द्रमाः
स स्वत्छाजितवान् विधुं त्वमपि मां क्वाहं क्व रासौ[3]विधुः ॥१५३॥

इसलिए प्रशंसक लोग संसार में अकबर को विष्णु के समान मानने लगे। अपनी बाहुओं के बल का प्रयोग करने से और सूर्य के समान तेजस्वी वह तर्जन करता हुआ अर्जुन सा (प्रशंसित हुआ) ॥१५१॥

वह जयेच्छु युद्ध में समस्त शत्रुओं को जीतकर अपने स्वामी (बादशाह) के चरण की शरण में लाने की कर्ण के जैसी उत्सुकतावाला राजाओं में श्रेष्ठ मानसिंह अपनी स्वकीर्ति से इस उदार (ऐश्वर्यपूर्ण) भुवन को पार लगाने में (अथवा तेजस्वी होता हुआ) बड़ा ही शोभित हुआ ॥१५२॥

इस समय वायु से उद्वेलित (चंचल) समुद्र कल्लोल वाणी द्वारा प्रसन्न आकृतिवाले राजा से विनय पूर्वक बोला ! हे रत्नाकर ! (राजा गुण रत्नों या धन से युक्त होता है) अहो ! आपकी भुजाओं का जो यह यशश्चन्द्रमा उदय हुआ है (जग में यश फैला है) उससे यह (आकाशी) चन्द्र ढंक गया है। अब तुम मुझे भी (आतंकित करते हो) तो मैं कहाँ और कहाँ तुम्हारा यशश्चन्द्र ॥१५३॥

---

१. मानसिंहः २. पोथयन् । ३. चासौ ।

---

1 तदारभ्य । 2. जनो । 3. पोतयन्ना ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

त्वत्कीर्त्या भुवनत्रयी–[१]वलया[1]ऽक्रान्तन्त्वयाऽक्रम्यते
चित्रन्ने[४]तदिहास्ति भूतलमणे भूमीपते लक्षये ।
शान्ति तावदुपैहि सम्प्रति विभो यन्मृग्यते गृह्यता–
मेवं सिंधुवचो निशम्य नृपतिपतिस्तत्याज तल्लज्जितः ।।१५४।।

भूमिः सत्पतरम्व[२]चो मुररिपोर्मेने द्वितीयं वरं
जेतारं जगतस्तथैव नृपतिं श्री पातिसाहिं पतिम् ।
आत्मानं च सतीमतीव मुदिता धर्मं च तीर्थानि च
ब्रह्म ब्रह्मारण सत्क्रियाः पुनरपि स्वछाऽनुमेने ततः ।।१५५।।

पत्रांक २७ ब

राना[३]भूपसुतं धनानि बहुशो रत्नानि वासांसि च
स्वच्छन्दं धरणीपति[४]स्व[3]तुरगान् दन्तावलान् विक्रमात्[4] ।
कीर्तिद्योतितभूरभूदनुमतो लोकत्रयेऽसौ मुदा
नानादेशपदार्थ[5]मतुलन्नीत्वा प्रतस्थे ततः ।।१५६।।

तेरी कीर्ति से यह सुवेला (सीमा) युक्त तीनों लोक तेरे द्वारा आक्रमण किये जा रहे हैं। हे राजाओं के मुकुट मणि यह आश्चर्य की बात मैं देख रहा हूं। अब तूँ शांति को धारण कर और जो प्राप्त किये जाने योग्य हो उसे ही ग्रहण करो। समुद्र के ऐसे वचन सुनकर राजा मानसिंह ने यह (समुद्र विजय का) विचार त्याग दिया और मन में लज्जित भी हुआ ।।१५४।।

पृथ्वीदेवी ने मुरारि (विष्णु) के वचन से दूसरे वरदान को बहुत सत्य माना और उसी प्रकार जगद्विजयी बादशाह को अपना पति वरण किया। वह अपने आप में बड़ी प्रसन्न हुई और धर्म, तीर्थ तथा ब्राह्मणों की सत्कर्मादि क्रियाएँ पुनः अनुमोदित हुई ।।१५५।।

अपने पराक्रम के बल पर अपने पुत्र, अतुल धन, रत्नादि, वस्त्रालंकार, घोड़े, हाथी आदि को स्वतन्त्रता पूर्वक लेकर भू-भण्डल में प्रकाशित उज्ज्वल कीर्ति वाला, तीनों लोकों में प्रसिद्ध (अनुमोदित) वह महीपति महाराणा अपार सम्पत्ति लेकर नाना देशों को प्रस्थान कर गया ।।१५६।।

---

१. 'च' अथवा 'सु'।   २. सत्यतरम्।   ३. राणा।   ४. धरणीपतिः।

---

1. त्रिवलया।   2. नैतर्दिहास्ति।   3. धरणीपतित्व।   4. विक्रमान्।
5. पदार्थं प्राप्तमतुल।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

एवं धर्मादिरक्षाक्षणविजितवला रातिजात [4]प्रतस्थे
प्राप श्री पातिसाह प्रपदतलमसौ मानसिंहः क्रमेण ।
सोऽप्येनं पातिसाही सदनविरचनास्तंभभूतं तु मत्वा
जेतुं जेतारमाशामतिबलवलितामुत्तरामादिदेश ।।१५७।।

मुरारिदासेनेत्यादि मानप्रकाशे किरणो द्वितीयः ।

इस प्रकार धर्मादि की रक्षा के समय शत्रुओं को बलपूर्वक जीतकर राजा मानसिंह ने धीरे-धीरे (क्रम से) प्रस्थान किया और बादशाह के चरणों में उपस्थित हुआ । उसने (बादशाह) भी इसे इस साम्राज्य रूपी भवन का मुख्य स्तम्भ (आधार) मानकर अति बलवती सेना देकर उत्तर दिशा को जीतने के लिये इस विजयी को आज्ञा दी ।

मुरारिदास द्वारा विरचित मान-प्रकाश में दूसरी किरण समाप्त ।

4. प्रतापः ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तृतीयः किरणः

एवं निर्जित राणाद्यो[1]तितविक्रमः ।
वृतोऽनुरूप भूपाले रेजे मेरुरिवाचलैः ॥१॥

तेषां विजितभूपानां देशेषु यद्यदुत्तमम् ।
वस्तुनोपायनेनासौ तेनासीत् प्रीतिवान्नृपः ॥२॥

अस्पृशद्भिरिव क्षोणीं खुरक्षेपभयातुराम् ।
उत्पातद्भिरिवं[2] व्योम व्योमयाहान् जिगीषुभिः ॥३॥

केनचिद्वाजिनां वृन्दे रत्नछदविराजिनाम् ।
करिणां केनचिद्व्यूहैः शैलशोभानुस रिणाम् ॥४॥

पत्रांक २८ अ

अस्त्रैश्च केनचिच्छस्त्रै र्वस्त्रैः केनचिदुत्तमैः ।
केनचिन्निजकन्याभिर्द्धन्याभिर्गुणविभ्रमैः ॥५॥

इस प्रकार राणा[3] को जीतनेवाला द्युतिमान पराक्रमशील अनुकूल भूपालों से घिरा हुआ (वरण किया हुआ) वह मानसिंह पर्वतों में मेरू के समान सुशोभित हुआ ॥१॥

जीते हुए राजाओं के देशों (राज्यों) में जो जो भी उत्तम वस्तुएँ थी उनसे वे भेंट रूप में लेकर वह प्रीतिवान् राजा आया युक्त हुआ ॥२॥

खुर (टापों) के आघात के भय से आतुर पृथ्वी को न छूते हुए आकाश में विमानों के समान उछलनेवाले, जय की कामनावाले, रत्नादि से जड़ी जीनों से सुशोभित अश्व-समूहों से तथा सुपर्वताकार सुन्दर गज पंक्तियों से कइयों ने (उसका आदर किया) ॥३-४॥

कई राजाओं ने अस्त्रों से, शस्त्रों से, कइयों ने उत्तम बहुमूल्य दुकुलों (वस्त्रों) से तथा कइयों ने गुणवती धन्य भाग्यशालिनी अपनी कन्याओं के द्वारा (उसका सम्मान किया) ॥५॥

---

1. राणाद्यो जयद्योतित । 2. इव । 3 राणा आदिको ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

रत्नेन केनचित्मुक्ता[1] दामाय[1] हृदयहारिणा ।
हारिणा कृतहारेण कृतं राज्ञोनुरंजनम् ।।६।।

राजाऽप्युपान्तवर्तिभ्य[2] स्वस्वदेशान्यथोचितम् ।
हतानां पुत्रपौत्रेभ्यो दापयामास सादरम् ।।७।।

श्रीपातिसाहचरणाच्छरणागतवत्सलात् ।
दापयित्वाधिकं काम्यात्तद्दुर[2] शेता[3]न्य योजयत् ।।८।।

कांश्चिदात्मवशे कृत्वा कुलशीलगुणोज्वलान् ।
तद्यथोचितरूपेण पालयामास भूपतिः ।।९।।

विश्वस्तैर्दानमानाभ्यां जयेन च वशीकृतैः ।
शुशुभे भूरि भूपालस्तैर्विवस्वानिव ग्रहैः ।।१०।।

कई (राजाओं) ने हृदयहारी (सुन्दर) हारों से तथा चमकीले रत्नों से और मोतियों की माला से उसका रंजन किया, उसे प्रसन्न किया ।।६।।

राजा (मानसिंह) ने भी अपनी शरण में आये हुओं को उनके यथोचित देश (राज्य) तथा जो मारे गये थे उनके पुत्रों अथवा पौत्रों को भी (उनके राज्य) आदर पूर्वक दिला दिये ।।७।।

श्री बादशाह के चरणों (पनाह) में आने के कारण और शरणागत वत्सलता के भाव से उन (शरणागत हुओं) की कामना से भी अधिक सम्पूर्ण (राज्यादि) दिलाने की योजना की गई ।।८।।

भूपति (बादशाह) ने जिन किन्हीं को अपने अधीन किया था उनका उनके कुल, शील और गुणों के अनुसार यथोचित पालन किया ।।९।।

विजय द्वारा अधीनस्थ तथा उपहार (भेंट) और सम्मान द्वारा विश्वास-पात्र राजाओं से युक्त वह राजा (सम्राट्) ग्रहगणों से घिरे हुए सूर्य के समान बहुत ही शोभा को प्राप्त हुआ ।।१०।।

---

१. च । २. वर्तिभ्यः । ३. शेषान् ।

---

1. दाम्ना । 2. तद्दुश्चैतान्नययोजयत् ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

स तदा बहुधा युद्धात् संलव्वा[1] वसरः कृती ।
चक्रं चक्रायुवं[2] स्थानं द्वारकां प्रति मानसम् ।।११।।

द्वारकां पुरुषार्थानां सिद्धे द्वारमिवस्थिताम् ।
गत्वा तां स्थापयिष्यामि पुरं धर्मपुरस्कृतम् ।।१२।।

तत्र नत्वा परं देवं दत्वा वसुवसुंधराम् ।
बहुधा मुर[1] धामानि संतुष्यामीत्यचिन्तयत् ।।१३।।

प्राणावास्य प्रतापेन यशसा च विसारिणा ।
वाडवोडुपराजेन द्वितीयेनैव संगतः ।।१४।।

समं वृत्त द्विधा[2] भावे[3]न्निन्मि[3]षन्नपि चोन्मिषन् ।
तथा बभूव पातो[4]धिः सन्ध्यापद्मवनोपमः ।।१५।।

युग्मकम्

तव प्रायः युद्ध से अवकाश पाये हुए उस सुकृती (पुण्यवान्) राजा ने चक्रधारी (विष्णु) के स्थान द्वारका के प्रति प्रयाण करने का मन में संकल्प किया ।।११।।

पुरुषार्थी पुरुषों की सिद्धि के द्वार के समान द्वारका उपस्थित थी । अतः वहां जाकर मैं नगरी को धर्म-युक्त बनाकर पुनः स्थापित करूंगा ।।१२।।

अपने परम इष्ट देव को नमस्कार करके और धन तथा भूमि का दान देकर मैं भगवान् के धाम को संतुष्ट करूंगा ऐसा उसने अपने मनमें विचार किया ।।१३।।

(जगत् में) फैले हुए प्रताप और यश से इसके प्राण मानों वडवाग्नि और चन्द्र दोनों से संयुक्त हैं अर्थात् प्रकाशमान हैं ।।१४।।

जैसे संध्या समय में कमल वन की स्थिति होती है—कि कुछ कमल खिले हुए होते हैं और कुछ संपुटित (बन्द) हो जाते हैं उसी प्रकार उस शांत समुद्र की द्विधा स्थिति हो गई ।।१५।।

---

१. संलब्धा । २ चक्रायुधं । ३. द्विधाभावन् । ४. पाथोधि. ।

---

1. सुर । 2 द्विधाभावं । 3. मिनेषन्नपि ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पत्रांक २८ ब— अत्रान्तरे रणहतारिकुल[1]ङ्गनानां
शोकादजस्रमिलदश्रुसरित्प्रवाहान् ।
दिग्भ्यः समागतवतश्च्युतकज्जलौघैः
[1]श्याभान्नदीक्ष्य जलधीश्चलधीबभूव ।।१६।।
कस्मादियं मलिनता सरितां विचिन्त्य
ताभ्यो विशेषमवधार्य बभूव भीतः ।
श्रीमानसिंहनृपतेश्चरितेन तेन
भीतिर्न कस्य सुतरां पररत्नभाजः ।।१७।।
अन्यच्च तब्बल[2] बलोद्धतवाजिराजी
प्रोद्धतधूलिभिरतिप्रचिताभिराभिः ।
शुष्यज्जलस्य यदलक्षितरणे[3] पानी
[4]सा लक्षितैव भविते त्यपि भीर्ममाभूत् ।।१८।।
एवं भयानुवलितोऽपि विमृश्य किंचि—
दानंदमेत्य निजचित्तमिदं बभाषे ।
रे चित्त मा भव भयातुरमेहि मोदं
राज्ञः प्रसादनविधौ परमस्त्युपायः[5] ।।१६।।

इसी समय रण में मारे गये शत्रुओं की कुलाङ्गनाओं के शोक से उनके नेत्रों से आंसुओं की नदी अविरल धारा में बह निकली । चारों दिशाओं के कज्जल राशि से निकल कर आने वाली काली नदी को देखकर समुद्र भी विचलित हो गया ।।१६।। (स्त्रियों के नेत्रों के काजल से युक्त आंसुओं से यह उपमा ली गई है–काव्यगत सौन्दर्य)

इस नदी की (में) यह मलिनता कहां से कैसे आई ऐसा विचार कर उनसे दोनों (आंसू-मलिनता) से विशेष रूप से अवधारणा करके वह (समुद्र) भी भयभीत हो गया । शत्रु के रत्न (धनादि) का पात्र (अधिकारी) राजा मानसिंह के उस चरित्र से भला कौन भयभीत न होगा ? ।।१७।।

और उसके विक्रम शौर्य के कारण बलशाली घोड़ों के समूह (की टापों) से उड़ी हुई उस धूल के ढेर से सूखा हुआ (जलविहीन) सा अलक्षित (न दिखाई देने वाला) भाव से वह भाविता (भावी) भी परिलक्षित सी (दिखाई पड़ी) हो गई । इससे मुझे (समुद्र को) डर हो गया है ।।१८।।

इस प्रकार भयभीत होता हुआ भी उसने विचार कर कुछ सुख (शान्ति) का अनुभव (प्राप्त) किया और अपने चित्त से यों बोला रे चित्त ! न भयभीत हो और न घबराओ, मन में प्रसन्न हो जाओ । राजा को प्रसन्नता के सम्बन्ध में यही परमोत्तम अन्तिम उपाय है ।।१६।।

---

१. कुलाङ्गनानाम् ।

---

1. श्यामान्नुदीक्ष्य । 2. तद्बल । 3. रेणु । 4. या । 5 परमस्त्युपादः ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पूर्वार्जितेन तपसा जपसाधनेन
सं प्रीनिता[1] मम सुता जगतां हिताय ।
भक्त्या च भूमिपतिनार्चितपादपद्मा
पद्मा तदीय भवनेहरिणा सहास्ते ।।२०।।

तास्यां समाहितमना समनामदीयं
नो विप्रियं किमपि संगमयिष्यतीह ।
नायास्यति ध्रुवमिहेष्यति वा तथापि
सौहार्द्रसंधिरपि मे भवितैव तेन ।।२१।।

अत्रैव चेन्नरपतिः स्वविचित्र युक्ता[2]
रत्नं सयत्नमुपनीयतरंगदोर्भिः ।
आश्लिष्यते किल तदा सचलां च दोर्भ्या-
मालिङ्गयिष्यति च मज्जलमज्जनेषु ।।२२।।

किम्वाथ तस्य हृदयं परिपूर्ण का (मं)

अपूर्ण ।।२३।। तृतीय किरण—

पूर्व (जन्म) या पहिले की हुई तपस्या और जपादि साधन के फलस्वरूप ही मेरी पुत्री (लक्ष्मी) जगत् के हित के लिये (विष्णु भगवान् को) विवाही गई थी । भक्ति के कारण तथा राजा द्वारा पूजित चरणों वाली होने से पद्मा श्री लक्ष्मी उसके महलों में हरि के समेत निवास करती है ।।२०।।

उन दोनों से सम्पन्न एकाग्रचित्त और मन वाला किसी भी प्रकार से मेरे प्रति विरोधी भाव नहीं रखेगा । निश्चय ही वह कहीं जायगा उसके साथ मित्रता की संधि अवश्य होगी ।।२१।।

समुद्र कहता है यहां ही अपनी विचित्र युक्ति द्वारा तरंग रूपी हाथों से यत्नपूर्वक रत्नोपहार देकर (प्रसन्न करूंगा) तो वह भी (अनुकूल होकर) अपनो दोनों भुजाओं से लक्ष्मी (चंचला) को आलिगन करेगा (अपनावेगा) और मेरे पवित्र जल में स्नान करके मुझ भी आलिङ्गन देगा ।।२२।।

अथवा उसका हृदय पूर्ण काम होगा । अपूर्ण ।।२३।।

। तृतीय किरण अपूर्ण ।

---

१ संप्रीणिता ।   २. युक्त्या ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

चतुर्थः किरणः—

प्रारम्भ के श्लोक अप्राप्य ।

पत्रांक ३० अ–

……………म [1]मनुते चिकीर्षवः स्यु–
स्तदाक्रिमथ चित्रमत्र यत् ॥१०॥

एवं हृदाकव्वरपातिसाहो
विचार्य धूर्यं च महोग्रवीर्यम् ।
रसाष्टरंध्रे गणिते सनाख्ये
राजानमाजानुभुजो दिदेश ॥११॥

[2]शूरयोऽपि हि वदन्ति [3]चक्ष्यते[1]
चित्तवृत्तमथ किं परस्य वै ।
गच्छ सिन्धुतटमाशु वैरिणो
गर्विणो जहि महीशमानिनः ॥१२॥

अस्त्रशस्त्रनिपुना[2] महाबलाः
सैनिकाः समन्वयान्तु मामकाः ।
जिष्णुमेत्य मनसाविचारतो
योजयेत् स च हुमाउनन्दनः ॥१३॥

……………मानता है। (वह) करने का इच्छुक हुआ तो तब क्या विचित्र है—आश्चर्य है ॥१०॥

इस प्रकार आजानु भुजा वाले बादशाह अकबर ने महान् प्रबल वीर और राज्य धुरा को धारण करने में समर्थ ऐसा हृदय से जानकर राजा (मानसिंह) को ज्योतिष गणनानुसार रसाष्टरन्ध्रे (९८६) नामक सन् (हिजरी) में (विजय के लिये) आज्ञा दी॥११॥

शूरवीर लोग भी कहते हैं कि सचमुच (वास्तव में) शत्रु के चित्त की वृत्ति को कैसे देखा (जाना) जाय अतः (तुम) शीघ्र ही सिन्धु (नदी) के तट पर जाओ और वहाँ मानी (घमण्डी) शत्रु राजाओं को मारो ॥१२॥

वह कहता हैं—कि मेरे सब महा बलवान् और अस्त्र-शस्त्र चालन में परम निपुण सैनिक गण ! तुम सब एकत्रित हो जाओ। हुमाऊँ (हुमायुँ) के पुत्र (अकबर) ने अपने मन में ऐसा विचार (संकल्प) कर जीतने की कामना करके यह योजना बनाई है ॥१३॥

---

१. चक्ष्यते, वक्ष्यते, लक्ष्यते। प्रथमाक्षर अस्पष्ट होने से तीनों पाठ लक्षित होते हैं।
२. निपुणा ।

---

1. मते । 2. सूरयोऽपि । 3. वक्ष्यते ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

उत्तरान्दिशमितोऽथ सत्वरं मानसिंह जहि भूपसम्मतान्[1] ।

आदिकुलकम्—

समं स्वसैन्यैर्भगवन्तदास-
मन्यांस्तथोग्रान् रजपूतमुख्यान् ।
तथा च कर्ता कुलकैव बंधुं
स सैदखानं मिरिजेसफं च ॥१४॥

महम्मदीकम्बलदीप्तबाहुं
हस्त्यश्वपादात[2]बलैरुपेतम् ।
गुणैरुदारं च मुबारखानं
सहस्रसंग्रामविवृद्धमानम् ॥१५॥

यः सायर सुरत्तानगखडान्वयसंभवः ।
सैदखानं महामानं दिदेश तमकव्वरः ॥१६॥

कृतानुरूपं परसैनिकाना-
मनन्त योधाबलिजातसंगम् ।
एतान् भटान् दुर्जयवीरवीर्यान्
प्रस्थापयामास हि सिन्धुतीरम् ॥१७॥

हे मानसिंह ! अब शीघ्र ही उत्तर दिशा की ओर जाओ और अभिमानी राजाओं को मारो ।

आदि कुलक —

अपनी सैना के साथ भगवन्तदास, प्रमुख-प्रमुख अन्य उग्र वीर क्षत्रियों तथा सैदखाँ और मिर्जा इसफ (खान) को, जो उच्च कुल वाले थे अपने बन्धु-बान्धवों के जैसा (से) सम्बन्ध स्थापित किया ॥१४॥

इस्लामी जोश से उद्दीप्त (फड़कती हुई) भुजा वाले वीरों, हाथियों, घोड़ों और सेना से युक्त हजारों (अनेक) युद्धों में बढ़े हुए (प्रसिद्ध), गुणवान् मुबारक खाँ को, जो सायर सुल्तान गक्खड़ वंश में उत्पन्न हुआ है तथा महा महिमा वाले सैयदखाँ को अकबर ने (युद्ध के लिये) आदेश दिया ॥१५-१६॥

अपने अनन्त योद्धाओं का बलवान् संग (संघ) बनाया और शत्रु सैनिकों के अनुरुप (युद्ध करने में समर्थ) बनाया । ऐसे इन दुर्जय वीर बलवान् भटों (योद्धाओं) को उसने सिन्धु नदी के तीर के लिये प्रस्थापित (रवाना) किया । ॥१७॥

---

1. भूपएकत्रितान् ।   2. पादाति ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पंजाबदेशे गुणपूरितासे
स जागिरीं वृत्तिकरीं नरेशः ।
व्यधान्महोद्दामयशा[1] विशाल
श्रीसाहजल्लाल[१]दि नाम धेयः ।।१८।।

पत्रांक ३० ब–

श्रीमानसिंहो भगवन्तदासः
ससैदखानो बलवानुदारः ।
लाहौरदेशं समवाप्य ते वै
पंजाबदेशन्तरसा[2] प्रतस्थः[२] ।।१९।।

य छल्य[३] राजस्य पुरं पुरस्तात्
त छाल[४] कोटं पुरमापुरेते ।
मिर्जेसफ़ं खानमुदारवीर्य–
मस्थापयद्रोहितकुध्रदुर्गे ।।२०।।

उवाच तं चैतदुदारकीर्ति–
रुदग्दिशं या वदहं जयामि ।
तावत्त्वमत्र स्थिरतामुपैहि
विजित्य भूपान् पुनरागमिष्ये ।।२१।।

बड़े यश वाले जलालुद्दीन नाम वाले श्री शाह (बादशाह) नरेश ने गुणों से परिपूर्ण देश पंजाब में जागीर को जीवन वृत्ति का साधन बनाया ।।१८।।

श्री मानसिंह, भगवन्तदास और बड़ा बलवान सैदखाँ ये सब लाहौर को प्राप्त करके निश्चय पूर्वक पंजाब देश की ओर फुर्ती से बढ़े (प्रस्थापित हुए) ।।१९।।

आगे शल्यराज का नगर था। उस स्यालकोट नगर में ये लोग पहुंचे (प्राप्त किया, जीत लिया) और फिर बड़े वीर बहादुर मिर्जा इसफखाँ को रोहित नाम के पहाड़ी (दुर्गम) (कुध्र) दुर्ग पर नियुक्त किया ।।२०।।

उस उदार सुन्दर कीर्त्तिवाले (राजा मान) ने कहा कि जब तक मैं उत्तर दिशा को जीतता हूं तब तक तुम यहीं स्थिरता से जमे (डट) रहो। मैं राजाओं को जीत कर फिर लौट कर आ जाऊँगा ।।२१।।

---

१. जलालुद्दीन । २. प्रतस्थुः, प्रतस्थाः । ३. यच्छल्यराजस्य । ४. तच्छालकोटं ।

---

1 यशो । 2. देशान्तरसा ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

बलेन भत्तान् कुटिलावनीपान
'कब्बर द्वेषिवतान्[1] प्रमथ्य ।
तदीय पादाब्जतलप्रपन्नान्
बलैः करिष्यामि शपे मुकुन्दम् ।।२२।।

अकब्बरे द्वेषिगणान् समस्तान्
क्षणद्रणे द्रावयिताहमेकः ।
नगान्निवेन्द्रः पतगः फणीन्द्रा-
निवापरान् दोर्युगलप्रतापैः ।।२३।।

[2]एवबहेलम्वदतस्तदानीं
स्पन्दोऽभवद्दक्षिणबाहुमूले ।
[3]अवत्य तद् मंगलमुग्रतेजाः
समेत्य तैस्तत्र नृपः प्रतस्थे ।।२४।।

अत्रान्तरे गच्छति मानसिंहे
योग्येन योग्यं घटयन् विधाता ।
संयोजयन्मानमहीश्वरेण
मुरारिदासं स्वधियं प्रयत्नात् ।।२५।।

अकवर से द्वेष करने वाले कुटिल और उन्मत्त राजाओं का मथन (दमन) करके बलपूर्वक (वा सेना समेत) उनको उस (बादशाह) के चरण कमलों में ले जाऊँगा । भगवान् मुकुन्द की शपथ लेता हूं (लेकर कहता हूं) ।।२२।।

अकवर के प्रति द्वेष रखने वाले समस्त शत्रु गणों को मैं अकेला ही क्षण भर में (बहुत जल्दी) नष्ट कर दूंगा व तितर बितर कर दूंगा । अपनी दोनों भुजाओं के बल प्रताप से शत्रुओं को मैं ऐसे भगा दूंगा जैसे इन्द्र ने पर्वतों और गरुड़जी ने सर्पों को भगाया था व नष्ट किया था ।।२३।।

इस प्रकार जब वह उत्साह पूर्वक बोला तब ही उसकी दक्षिण भुजा का मूल (भाग) फड़क उठा । उस तेजस्वी राजा ने इसे मंगल (सूचक) जानकर वहीं सबको एकत्र कर आगे प्रस्थान कर दिया ।।२४।।

उस समय जब मानसिंह ने प्रस्थान किया तब विधाता ने योग्य के साथ योग्य का मेल घटा दिया (करा दिया) उसने (विधाता ने) महाराजा मानसिंह से अपनी निज की बुद्धि से सम्पन्न मुरारिदास को प्रयत्न पूर्वक मिला दिया; सुसंयोग करा दिया ।।२५।।

---

१. अकब्बर । पूर्व संधि से 'नकब्बर" होना चाहिये ।

---

1. द्वेषवतान् । २. एवं सहेलं । 3.

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

वडहराकुल वारिधि चन्द्रमा
परशुराम सुतोऽरितमोऽन्तकः ।
इह हि चित्रमिदं परिदृश्यता[१]
यदयमस्ति पुरारिपदानतः ॥२६॥

[1]समभूद्वसुधासुधाकरो
वड(ह)रा वंशधरः पुरस्सरः ।

पत्रांक ३१ अ–

[2]विधिवत् स्तुति तत्त्वनिष्ठया
भुवि योजेन विकल्पताङ्गतः ॥२७॥

तस्मादभूत् परशुराम इति प्रसिद्धो
यो बाल एव पितुरप्यधिक प्रभावः ।
नालोक्य यस्य वदनेन्दुमुपेतकालः
स्वर्गस्थितोऽपि परिशोचति राजराजः[२] ॥२८॥

सन्तानकामस्त्रिदशानभीष्टान्
द्विजान् गुरून् शुद्धहृदा समर्च्य ।
लेभे सुतांस्त्रीनभिरामरूपान्
धर्मार्थकामानिव स क्रमेण ॥२९॥

वडहरा (खत्री) कुल रूपी समुद्र का चन्द्रमा परशुराम का पुत्र शत्रुरूपी अंधकार का नाश करने वाला था। यहां यह चित्रम् (आश्चर्य) देखा जाता है कि यह भगवान् त्रिपुरारि (शिव) के चरणों में अवनत है–शरणापन्न है।२६॥

यह वडहरा वंशधर अग्रगण्य हुआ और पृथ्वी के लिये यह सुधाकर (अमृतवर्षी चन्द्रमा) हुआ।

विधि पूर्वक स्तुति तत्त्व की निष्ठा द्वारा इस जगत् में (भुवि) योजनानुसार विकल्पता को प्राप्त हुआ ॥२७॥
(वि+कल्पता-संदेह, विरोपेण कल्पता निश्चय-दोनों में से जो उपयुक्त)

इसलिये वह परशुराम नाम से विख्यात हुआ जिसने बालक होते हुए भी पिता पर बहुत अधिक प्रभाव डाला। जिसके मुखचन्द्र को न देखकर स्वर्गस्थ राजराज (इन्द्र, कुबेर) भी समय आने पर सोच में पड़ गये ॥२८॥

सन्तान प्राप्ति की कामना से अपने प्रिय इष्ट देवों, ब्राह्मणों तथा गुरुओं (पूज्य जनों) को शुद्ध (पवित्र) हृदय से पूजकर उसने क्रम से धर्म, अर्थ और काम रूप सुन्दर रूप वाले तीन पुत्र प्राप्त किये ॥२९॥

---

१. परिदृश्यतां। २. राजराज की उपाधि कुबेर के लिये प्रसिद्ध है।

---

1. समभवद्वसुधा। 2. विधिवद् विधिवत्।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

नाम्ना मुरारिर्मुरवैरिणोंशो
ज्येष्ठोऽपरः शंकरदास (वि) ज्ञः ।
तस्मात्परः सुन्दरनामधेयो
येषां यशोभिर्जगती पवित्रा ।।३०।।

विद्याविवेको विनयो विशुद्धि–
र्विदग्धता विश्वजनानुरागः ।
समं समीयुः त्रिदिवप्रभावां
स्तांस्त्रीन् कुमारान् दिवसैः कियद्भिः ।।३१।।

तत्राप्यशेषगुणगौरवगुंफितश्रीः
श्रीमान् मुरारिरभवद्भुवनप्रधानः ।
यद्बुद्धिकौशलवशान्नृपमानसिंहः
कृत्स्नां महीं पुरमिवाप्रतिमं श[1]शंस ।।३२।।

वाग्मी विद्वान्वदान्यो द्विज जनविनतोवत्सलः स्वच्छचित्तः
चान[1] क्यस्येव यस्य निजगति न समः संधिभेदप्रबन्धे ।
शुद्धाचार स्वभावः सुचरितहसिताशेषराजर्षिवृत्तो
मान्यः श्रीमान् मुरारि हरि[2] हरचरणांभोजमाध्वीकभृङ्गः ।।३३।।

मुरारि नाम का बड़ा पुत्र था जो मुर के शत्रु विष्णु का ही अंश था। दूसरा शंकरदास था जो बड़ा विज्ञ-ज्ञानी था। उससे भी दूसरा (अर्थात् तीसरा) पुत्र हुआ जिसका नाम सुन्दर (दास) था। उनके यश से यह संसार भी पवित्र हो गया ।।३०।।

विद्या, विवेक, विनय, विशुद्धभाव, चातुर्य और सम्पूर्ण विश्व के मानवों से प्रेम आदि ये सब सद्गुण एक ही साथ देवतुल्य प्रभाव वाले इन तीनों कुमारों में कुछ ही दिनों में आ गये ।।३१।।

तो भी इनमें श्रीमान् मुरारि सम्पूर्ण गुणों से युक्त और शोभा वाला होकर जगत् में प्रमुख हो गया जिसकी बुद्धि की कुशलता के वशीभूत होकर महाराजा मानसिंह ने सारी पृथ्वी में और नगर-नगर में उसकी प्रशंसा की। ।।३२।।

सुन्दर वक्ता, विद्वान्, उदार दानी, ब्राह्मणों के प्रति विनम्र, वात्सल्य भाव से सम्पन्न, निर्मल चित्त, संधि-विग्रहादि नीति में जिसकी अपनी गति से चाणक्य भी क्षमता नहीं कर सकता, आचरण और स्वभाव शुद्ध और पवित्र, सुचरित्रवान्, हंसमुख, राजा के सम्पूर्ण शुभ गुणों से युक्त और सम्मान्य श्रीमान् मुरारिदास भगवान् विष्णु और शिवजी (दोनों) के चरण कमल के मकरन्द (मधु) का प्रेमी भृंग है। अर्थात् दोनों का भक्त है ।।३३।।

---

१ चाणक्यस्य । २. हंरि ।

---

1. प्रशास ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पत्रांक ३१ ब-

धर्मप्रसूत्यै नृपमानसिंहः
श्रीमान्मुरारिं समवाप्य तत्र ।
तं मन्त्रिणं क्षत्रकुलप्रसूतं
विधाय भूमीरमणः प्रतस्थे ।।३४।।

आदौ[1] स्वजम्बुगिरिदुर्गराजं
कपूरदेवं जितवैरिवृन्दम् ।
मल्हासवंशोद्भवं मालदेव-
भूपान्वयं प्राप स मानसिंहः ।।३५।।

आकर्ण्य सोऽप्यागमनं नृपस्य
पुराद्विनिःसृत्य पुरो बभूव ।
विलोक्य तं कंचन सिंहनादं
चक्रुस्तदा मानमृगेन्द्र योधाः ।।३६।।

आरेभिरे युद्धमतः समृद्धा-
स्तयोस्तदा संयति सैनिकास्ते ।
मही चकम्पे चकितः फणीन्द्रः
कूर्मोऽपि घर्मक्तवपुर्बभूव ।।३७।।

धर्म के उद्धारार्थ राजा मानसिंह ने श्रीमान् मुरारि को वहां प्राप्त किया। क्षत्र (खत्री) कुल में उत्पन्न उसको मन्त्री पद पर अधिष्ठित किया। तब पृथ्वीरमण मानसिंह ने प्रस्थान किया ।।३४।।

सबसे पहले उसने कपूरदेव को, वैरी समूह को तथा जम्बु गिरि (जम्मू) के किले को जीता और मल्हास वंश में उत्पन्न मालदेव राजा के वंश को प्राप्त किया (अपने वश में किया) ।।३५।।

वह भी राजा (मानसिंह) का आगमन सुनकर नगर से बाहर निकल कर सामने आ गया। उसको देखकर मृगराज के समान वीर योद्धा मानसिंह ने सिंहनाद करके कुछ गर्जना की ।।३६।।

तब रणांगण में दोनों के समृद्ध सैनिकों ने युद्ध आरम्भ कर दिया। उस समय ऐसा तुमुल घमासान युद्ध हुआ (कि) पृथ्वी डोल उठी, नागराज (शेषजी) चकित हो गये और कच्छपराज का शरीर भी पसीने से तर हो गया ।।३७।।

1. सजम्बु ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

कपूरदेवस्य भटा गरिष्ठाः
श्रीमानसिंहस्य चमूं चकर्तुः ।
विलोक्य तद्भू मिपतिः स्ववीरान्
दिदेश योद्धुं त्रिदशानिवेन्द्रः ।।३८।।

आगत्य ते तत्र मिथस्तदानीं
चक्रुः कृतान्ता इव बाण वर्षे[1] ।
छिन्नोरुबाह्वङ्घ्रिहृदो निपेतुः
केचिद्विनेशू रणरंगसंगाः ।।३९।।

विलोक्य वीरो विकलं स्वसैन्यं
स्वयं प्रतस्थे विनिहत्य भेरीम् ।
राजा तदा कोपपरीतचेताः
परान्विजेतुं समुपाजगाम ।।४०।।

भेरी निनादैरथ वीरनादैः
पत्रांक ३२ अ– शंखस्वनैर्वारणबृंहितैश्च ।
हृषैस्तुरंगस्य [1]सरङ्गगन्तु–
र्ज्जगत्रयं पूरितमास तूर्णम् ।।४१।।

कपूर देव के भारी भटों (वीरों) ने श्री मानसिंह की सेना को काट दिया । तब यह देखकर महाराजा (मान) ने देवताओं को जैसे इन्द्र ने आज्ञा दी थी वैसे ही अपने वीरों को युद्ध के लिये आदेश दिया ।।३८।।

तब वे सब वहाँ एकान्त में आकर (एकत्र होकर) यमराज के समान बाणों की वर्षा करने लगे । (उसके परिणाम स्वरुप) वे जांघ कटे हुए, बाहुएं और पांव कटे हुए और हृदय छिदे हुए होकर भूमि पर गिर पड़े और कई रण-रंग में मत्त हो गये ।।३९।।

तब उस वीर (कपूरदेव) ने अपनी सेना को विफल देखकर नगाड़ा बजाया और स्वयं प्रस्थान किया । तब राजा (मानसिंह) कोपान्वित होकर शत्रुओं को जीतने के लिये समुपस्थित हुआ ।।४०।।

भेरी (रणवाद्य) नाद, वीरों की गर्जना, शंख ध्वनि, हाथियों के चिंघाड़ने और हिरण के जैसे तेज भागने वाले घोड़ों के हिनहिनाने से शीघ्र ही तीनों लोक व्याप्त हो गये, ध्वनित हो गये ।।४१।।

---

१. सारङ्ग ।

---

1. वर्षं

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

संयुद्धतस्तस्य महीश्वरस्य केचिन्निपेतुः शरपाणयोऽपि ।
केचित्तथा खड्गहृतोत्तमाङ्ग[1] भिपेतुरुर्व्यां गुरुगर्विणापि[2] ।।४२।।

गजैर्हतानां गजपुङ्गवानां हयैर्हतानां हयपुङ्गवानाम् ।
यत्पत्तिनां पत्तिबलैर्हतानामसृङ्नदी तत्र बभूव तेषाम् ।।४३।।

हत्वा प्रवीरान् बहुशो नरेशो
जिगाय कांश्चित्कुटिलक्षितीन्द्रान् ।
तं चापि जित्वा नृपमानसिंहो
देशं च दुर्गं च[3] हृतवान् सुदुर्गम् ।।४४।

कपूरदेवं च विजित्य युद्धे
तथा तदीयं तनयं विजित्य ।
त्रिकूटभूमीधरपारभूतं
तं लालदेवं जितवान् बलेन ।।४५।।

कृपालुतापन्नमना महीपः
कपूरदेवस्य तनू (च) पुत्र्यौ ।
विवाहयित्वा विधिवद्दयालु-
स्तदीयदेशान् प्रददौ स तस्मै ।।४६।।

उस राजा ने भली प्रकार युद्ध करने से कई वीर, जिनके हाथों में वाण थे, तो भी धराशायी हो गये । कई जिनके उत्तमाङ्ग (सिर) तलवार से काटे गये थे, बड़े भारी गर्व के साथ भूमि पर गिर पड़े ।।४२।।

हाथियों से मारे गये गजराजों के, घोड़ों से मारे गये बलवान् घोड़ों के तथा पैदलों द्वारा मारे गये सैनिकों के रक्त से वहां रूधिर की नदी प्रवाहित हो गई ।।४३।।

राजा मानसिंह ने कई वीरों को मार कर और कई कुटिल राजाओं को जीत कर तथा उसको (कपूरदेव) को भी जीत कर उसके देश (राज्य) और सुदृढ़ किले को भी छीन लिया ।।४४।।

युद्ध में कपूर देव को जीत कर और उसके पुत्र को भी पराजित कर त्रिकूट पर्वत को पार करके उस लालदेव को भी बलपूर्वक जीत लिया ।।४५।।

करुणामय हृदय वाले उस दयालु राजा (मानसिंह) ने कपूरदेव के दो पुत्र और दोनों पुत्रियों का विधिवत् (धार्मिक रीति से) विवाह कर उसके देश को उसे पुनः लौटा दिया ।।४६।।

---

1. तमाङ्गाभिपेतु । 2. गर्विणोपि । 3. दुर्गं हृतवान् ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अनेन विधिना नृपो विजितवानुदीचीनृपान् ।
महीधरदरी गृहान् बदरिकावधिस्थानपि ।।
ततो जयचंदञ्च तन्नगरकोटभूमीपतिम् ।
तदीय सुत पुत्रिकामयमुवाह वीराग्रणीः ।।४७।।
चम्पा भूमिपतिं महोग्रबलिन[1] भड्डूमहीपं तथा
गोग्रालीयरभूभृतं बलभृतं जित्वा जगद्भूषणः ।
डाढौ ग्रालमहीपतिं नववरं पैठानभूपं ततः

/पत्रांक ३२ ब

श्रीमानेष/जिगाय किंचि[1] जगतीनाथः प्रतापं[2] शुमान् ।।४८।।
शाम्बा भूपति भूषणं च जसरोटाद्यं महीपालकं
तद्वद मानसुकोट भूमिरमणं वाहेन्द्रराजन्ततः ।
हैताल।वलि[3] पालकं च गुणिनं भूपालभूपं तथा
जैरालावनिपालकप्रभृतिकं राजा जिगाय क्षणात् ।।४९।।
अन्यानप्यवनीपतीन्द्रतिलकान् जित्वा च सेवापरान्
चक्रेऽकब्बरभूभृतो नरपतिः श्रीमानसिंहः कृती ।
तेषां देशगणान् कृपाभिरखिलान् तेभ्यः कृपावान् ददौ
दत्त्वा तस्य महीश्वरस्यवशगान् कृत्वा प्रतस्थे ततः ।।५०।।

इस प्रकार राजा (मानसिंह) ने पर्वतों की गुफा ही जिनके निवास है उन ऐसे बद्रीनाथ की सीमापर्यन्त बसे हुए उत्तर के राजाओं को जीत लिया ।

उसके पश्चात् नगरकोट के राजा जयचन्द को जीतकर उस वीराग्रणी ने उसके पुत्र और पुत्री का विवाह भी सम्पन्न किया ।।४७।।

जगद्भूषण, जगत्पति प्रतापी, (सूर्यवत्) तेजस्वी राजा (मान) ने चम्पा के महाबली नरेश को, भड्डू के राजा को, गोग्रालियर के बलवान् राजा को जीतने के बाद डाढौग्राल के भूपति तथा नववर पैठान के राजा को जीता ।।४८।।

शाम्बा के नृपश्रेष्ठ को, जसरोटा के आद्य (पहले) राजा को, उसी प्रकार मानसुकोट के भूमिरमण (राजा) को, वाहेन्द्र के राजा को (वाह के इन्द्र नामक राजा को), हैताल भूमि के गुणी राजाओं के राजा को तथा जैरालो की भूमि के राजा (राजोटी) आदि को राजा (मानसिंह) ने बहुत थोड़े समय में ही जीत लिये ।।४९।।

उस भाग्यवान् नरेश मानसिंह ने अन्य अवनिपतियों में श्रेष्ठ राजाओं को भी जीत कर बादशाह अकबर की सेवा में परायण (संलग्न) किया । उस दयालु राजा ने कृपा करके उनके सम्पूर्ण राज्यों (देशों) को लौटा दिये और ये राज्य उन्हें देकर उनको बादशाह के अधीन कर तब वहां से उसने आगे प्रस्थान किया ।।५०।।

---

१ बलिनं ।　　२ प्रतापांशुमान् ।　　३. हैताला।वनिपालक ।

---

1. किंच ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

स्वस्थनि[1] पुररिपोर्यद्देविका निम्नगा
तीरस्थं सहसा सहैव बलिभिस्तैरेव वीरैर्बली ।
तत्रागत्य हिमाचलान्तरमलं देवालयं दत्तवान्
पत्रैते[2] गिरिशं शचीश चतुरास्याद्या नमस्यन्तियम् ।।५१।।

दत्वा देवनिकेतनं सुरुचिरं श्रीमानसिंहश्चिरम्
चित्ते चन्द्रमुखो ननन्द विजितोदीची महीमण्डलः ।
तस्मिन्देवनिकेतने स्वनियतं देवानिवासान्विता
जाताः शंभुपदेप्सवोवत दिवं हित्वा मुकुंदादयः ।।५३।।

केषां वीरवरो जहार तनयां दंडं च केषां बलात्
केषां देशमनुत्तमं बलवतां केचित्प्रजावत्कृताः ।
/पत्रांक ३३ अ
दत्वा जागिरिमुन्मदेन बलिना केभ्यो नरेभ्यः क्षणा–
देकेनैव दयालुनापरमहीपालाः पुनः स्थापिताः ।।५३।।

उस बलशाली (मानसिंह) ने देव नदी गंगाजी के तटवर्ती (पुरारि) शिवजी के स्थान, पुर और मण्डल में अपने बलवान् वीरों के साथ एकाएक आकर हिमालय प्रान्त स्थित देवालय (शिवालय) को प्रचुर (पर्याप्त) दान दिया। जहां उन भगवान् गिरीश को शची पति इन्द्र और चतुर्मुख ब्रह्मादि देवता प्रणाम करते हैं ।।५१।।

उत्तर के नृपवृन्द को जीतने वाला चन्द्रमुख राजा मानसिंह उस मनोहर देवस्थान को देखकर चित्त में बहुत (समय तक) प्रसन्न हुआ। उस देवालय में अपनी स्वतन्त्रता से (नियमपूर्वक) देवता से युक्त मुकुन्दादि देवगण भी स्वर्ग को छोड़ शिवजी के चरणों के ईप्सु (इच्छुक) हो गये ।।५२।। (राजा भी शिव भक्त हो गया)

उस वीरवर ने किसी की कन्या का हरण किया तो किन्हीं से बलपूर्वक दण्ड (कर) लिया। किन्हीं बलवानों का देश छीन लिया तो कइयों को प्रजा (अधीनस्थ) बना लिया। कइयों को जागीरें देकर उस अकेले विजयोन्मादी बलवान् दयालु राजा द्वारा राजा लोग अपने अपने स्थानों पर पुनः स्थापित कर दिये गये ।।५३।।

---

१. स्वस्थानि । २. यत्रैते ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

ये कांश्चिन्नमिलन्तिभूधरदरी दुर्गस्थिता नित्यशः
ते सर्वे विजयं निशम्य नृपतेर्भीत्या मिलन्भूमिपम् ।
हित्वा भूमिधरं तथापरमहीपालाः कुटुम्बान्विताः
सेवाञ्चक्रुवकव्वरस्य[1] क्षितिभुजः[1] प्रारभ्यतद्वासरात् ।।५४।।

नीत्वासौ सहरन्नरेशतिलको राजौरपर्यन्तकं
काश्मीरं बलिभिः सहैव तरसातैरेवजेतुं जयी ।
प्रस्थानं कृतवान्बलेन बलवान् दूतैरवेत्यैतितं
चिन्ताम्प्राप दुरत्तरामतितरां काश्मीरभूमिपतिः ।।५५।।

साकं तेन महीश्वरेण मिलनं नाहं विधास्ये यदि
क्रुद्धो नाशयिता द्रुतं मम पुरीं नास्त्यत्रचित्रं च तत् ।
आदौ ......रथास्ति मामक रिपुर्गत्वा मिलत्सो नृपं
तस्मादीसपखानमेक तनयम्प्रस्थापयद्भीषतः ।।५६।।

जो नहीं मिले थे और पर्वतों की कन्दराओं में सुरक्षित से नित्य रहते थे वे भी सब इस राजा (मानसिंह) की विजय (के समाचार) सुनकर भयभीत हो उससे (राजा से) आकर मिल गये। पर्वतीय निवास को छोड़कर राजा अपने कुटुम्बियों समेत उसी दिन से बादशाह अकबर की सेवा करने लगे (अधीन हो गये) ।।५४।।

अपनी बलवती सेनाओं के साथ, जिन से जीतने के लिये वह जयशील राजाओं का तिलक (मानसिंह) तेजी से बलपूर्वक राजौर पर्यन्त काश्मीर को जीतने के लिये आगे बढ़ता गया। काश्मीर का शक्तिशाली राजा अपने दूतों द्वारा यह जानकर बहुत चिंतित हो गया ।।५५।।

यदि मैं इस राजा से मिलने की योजना नही बनाऊंगा तो यह क्रोधी (मानसिंह) शीघ्र ही मेरी पुरी (राजधानी) को तहस-नहस कर देगा। इसमें कोई आश्चर्य नहीं। (मुझसे) पहले ही कहीं..............,जो मेरा शत्रु है, इस राजा से जाकर मिल (न) जाय इसलिये उसने अपने एक मात्र पुत्र ईसफ खान को भयतीत होकर (उसके पास) भेज दिया ।।५६।।

---

१. सेवा ञ्चक्रुरकव्वरस्य।

---

1. नृपतेः

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

यावन्ति स्थितवन्ति कुंङ्कुममहीखण्डानि दण्डानुव–[1]
स्तद्वत्पामरिका* करानपि भिया प्रादाद्धुमासू[1]– नवे ।
एवं सर्वमहीभृतो बलभृतो जित्वा रेणे[2] जित्वरः
श्रीमान्मानसहीमहेन्द्रतिलकः प्रावर्तयत्तत्क्षणात् ।।५७।।

/पत्रांक ३३ ब

धर्मान्वेदपुरस्सरानणु तथा तीर्थानि विप्रानथो[2]
देवानां सदनानि भूनिरमणः संस्थाप्य दीनानपि ।
तैस्तैः संगरकारिभिर्जितनृपैः महीवासरः
प्रापाकव्बरभूभृतः पदतल[3]यानैस्तुरङ्गान्वितैः ।।५८।।

श्रीः– इति श्रीरायमुरारिदासकृते मानप्रकाशे
उत्तरदिग्विजयो नाम चतुर्थः किरणः ।

जितने विस्तार में यह कुंकुममही (केसर-भूमि) का भाग (काश्मीर खण्ड) फैला हुआ था वह सब दण्डानुकूल (करदाता) हो गया और उसी प्रकार पामरिका (नीच) राजा ने भय से आतंकित हो हुमायूँ के पुत्र (बादशाह) अकबर को कर दिया । इस प्रकार सभी बलवान् राजाओं को रण में जीतकर वह विजयी भूपालों में श्रेष्ठ श्रीमान् मानसिंह शीघ्र ही लौट आया ।।५७।।

वेदपुरस्सर (वेदानुकुल) धर्मों को, तीर्थों, ब्राह्मणों, देवस्थानों और दीन दुःखियों को भी संस्थापित करके वह भूमि रमण (राजा) पृथ्वी पर दिन के समान प्रकाशमान मानसिंह युद्धेच्छु जीते गये (संधि किये हुए) राजाओं समेत घोड़ों से जुते हुए यानों (रथों) से बादशाह अकबर के चरणों में उपस्थित हुआ ।।५८।।

श्री इति श्री राय मुरारिदास कृत मान-प्रकाश में उत्तर दिग्विजय नाम का चतुर्थ किरण ।

---

*पामीर पर्वत का राजा भी अर्थ हो सकता है ।

१. हुमायू सूनवे । २. विप्रानथ ।

---

1. नव । 2 जित्वारणे । 3. पदतलं ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पंचमः किरणः

......................देवे ।

/पत्रांक ३३ ब चालू

अ प स ग्वि यः = अथ पश्चिमदिग्विजयः

अथैवमाजौ जितजिष्णु जेता उदग्दिशं दोर्युगलेन जित्वा ।
विदायमादाय हुमाउ[1]सूनोः सपश्चिमामेव दिशं प्रतस्थे ।।१।।

स शालकोटान्नृपमानसिंहः सिंधु[2]व्रजन्नाह जयिष्णुरेतत् ।
नीलावकं यान्तु भटा गरिष्ठा ये पातिसाहस्य हिते निविष्टाः ।।२।।

भगवन्तदासेसफसैदखांद्या नित्याह भूमीरमणो नृसिंहः
पंजाबदेशस्य[1]वृत्तिभुग्भिः सहैव नीलावपुरं व्रजध्वम् ।।३।।

श्री पातिसाहस्य हिताय यूयं व्रजन्त तीव्रं बलेन[2] वीराः ।
इत्याह तांस्तेन स मानसिंहो मिर्ज्जा............. ।।४।।

अथ पश्चिम दिग्विजय

अपनी दोनों भुजाओं के बल से उत्तर दिशा को जीतकर युद्ध में जयेच्छु राजाओं को जीतने वाले उस (मानसिंह) ने हुमायूँ के पुत्र (अकबर) का परामर्श (विदा) पाकर अब पश्चिम दिशा की ओर प्रस्थान किया ।१।।

विजय की कामना वाले उस राजा मानसिंह ने स्यालकोट से सिन्धु (नदी, देश) को जाते समय यह कहा कि जो बादशाह के हितेच्छु हैं वे वीर योद्धा लोग नीलावक को चले जायं ।।२।।

भूमि रमण नरों में सिंह (राजा मानसिंह) ने भगवन्तदास, इसफ (खाँ) और सैदखाँ आदि को यह कहा कि पंजाव देश के वृत्ति भोक्ताओं (राजाओं) के साथ आप लोग नीलाव पुर को चले जावें ।।३।।

आप वीर लोग बादशाह के हित में सेना समेत तीव्रता से जाये ऐसा उनसे कहकर वह मानसिंह मिर्जा................अपूर्ण ।।४।।

---

१. हुमायु । २. सिंधु ।

---

1. देशस्य च । 2. सुबलेन ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

.... न्य धूननं

पत्रांक अ ६६

दान मान बलवद्वलार्पणा................
................योग्य याग्य भुवि सन्निवेशवान्त[1] ।।

एवं विज्ञाय राजाज्ञां ते विज्ञाय यथोचितम् ।
महासिंहादयः सर्वे विदध्युः सर्वमीहितम् ।।१।।

त्रिपुरा कामरूपादि भूपसेना सहायवान् ।
उसमानः प्रतिष्ठानो यत्रास्ते मघयोजितः ।।२।।

एगारसिंदूरोपान्ते तन्निराकर्तुमुद्यतः ।
सिंहवत्सबलैर्युक्तो महासिंहः स्वयं स्थितः ।।३।।

तथा हेमतसिंहस्य तनयो विनयोज्वलः ।
श्रीमत्कुशलसिंहोऽपि राज्ञा दक्षिणतः स्थितः ।।४।।

मघाधिप महासैन्य सिंधुमंडनमन्दरः ।
मुरारिदाससहजसंमुखे रायसुन्दरः ।।५।।

पहली पंक्ति अपूर्ण होने से अस्पष्ट ।

इस प्रकार राजाज्ञा को जानकर उन्होंने यथोचित कार्य समझकर महासिंह आदि सबों ने सब इच्छित कार्य सम्पन्न किये ।।१।।

जहां त्रिपुरा, कामरूप आदि की सहायता से युक्त (प्राप्त कर), मघराज द्वारा नियोजित उसमान, प्रतिष्ठित हुआ ।।२।। अर्थात् युद्ध के लिये प्रस्तुत हुआ ।

एगारसिंदूर के समीप उसे दूर करने के लिये तत्पर सिंह के समान बल से युक्त महासिंह स्वयं स्थिर बना रहा (डटा रहा) ।।३।।

उसी प्रकार हेमतसिंह का विनयशील पुत्र श्रीमान् कुशलसिंह भी राजा के साथ दक्षिण भाग में रहा ।।४।।

मघ के राजा की महा सेना रूपी समुद्र का भूषण मंदराचल मुरारिदास का सहोदर (सहज) भाई राय सुन्दर (दास) भी सामने उपस्थित हुआ ।।५।।

---

1. सन्निवेशनान्त ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

एतेषामनुगाः सर्वे सैन्य सैन्याः परे यथा ।
स्थानविशेषेण[1] विदधुर्युद्धकौशलम् ।।६।।

श्रीमानसौ मानसिंहः सिंहवद्गिरिमूर्द्धनि ।
स्थितो वन्दरदुर्गेऽस्मिन् दिदृक्षुर्युद्धकौतुकम् ।।७।।

योगिनीघ[2]हृतस्तावदेगारसिंदूरावधि ।
षष्टिक्रोशान्वितं भूमेर्मण्डनं भूरिमंडनम् ।।८।।

तत्र तत्रस्थितैर्योधैर्भूपेनापि व्यराजता[3] ।
यथा ग्रहगणैश्चेदं ग्रहाणां प्रभुणा नभः ।।९।।

पत्रांक ६६ ब

सोऽपि दुःसह महोभिरञ्चितो मानसिंहमपि सिंहविक्रमम् ।
जेतुमुत्सुकतया तयार्थितः सैनिका[4]त्समुपधायतस्थिरान् ।।१०।।

इसके सब अनुगामी सैन्य तथा शत्रु सेना वालों ने भी अपने अपने स्थान विशेष से युद्ध कौशल प्रदर्शित किये ।।६।।

उस श्रीमान् मानसिंह ने पर्वत शिखरस्थसिंह के समान बन्दर किले में स्थित होकर इस युद्ध कौतुक को देखा था ।।७।।

तब एगारसिंदूर पर्यन्त (जिला मेमनसिंग) योगिनी हन्ता के द्वारा हरण किया गया । ६० कोस (१२० मील) के घेरे (क्षेत्र) वाली भूमि को मंडन करने वाला स्वयं मंडन रूप (हुआ) ।।८।। (अर्थ फिर भी अस्पष्ट है)

स्थान-स्थान पर स्थित योद्धाओं से युक्त उस राजा से ऐसी शोभा हुई मानो यह आकाशस्थ ग्रह गणों से युक्त ग्रहों के स्वामी (सूर्य) के समान सुशोभित हो ।।९।।

(महोभिः अभिरंचितः बड़े समारोहों के साथ सम्मानित)

वह भी जो दुःसहवीर था और बड़े-बड़े समारोहों द्वारा सम्मानित था सिंह के समान शौर्यवान् मानसिंह को भी जीतने की इच्छा (उत्सुकता) से अर्थी होकर सैनिकों से आगे उसके समीप जाकर खड़ा हो गया ।।१०।।

---

1. यथास्थान । 2. घट्टतस्तावदे । 3. व्यराजत । 4. सैनिकान्सम ।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

तत्र तत्र बलयोस्तदातयोः
प्रौढबाहुबलयोरहर्न्निशम् ।
युद्धयतो[1] बलमनाहतासु नो-
विधुतोर्ज्जय[2]यशः परस्परम् ।।११।।

मज्जतोस्समरसागरेऽधिकै
गृह्णतोर्बहुयशोऽति मौक्तिकम् ।
उज्झतामलिनतामिवाप्यसू
धन्ययोरूभयसैन्ययोरपि ।।१२।।

ब्राह्मणोचितकुलाङ्गणामिव[3]
प्रौढयुद्धभुविनिन्दितश्रियाम् ।
दर्शनाद्भय दयोर्हि कुर्वतो-
भीतिमेव सहसा पलायिताम् ।।१३।।

वहां उन दोनों बलवानों का जिनकी भुजाओं का बल बढ़ा हुआ था, रात और दिन (लगातार) युद्ध हुआ । युद्ध करते हुए दोनों ही एक दूसरे के बल को तिरस्कृत करने लगे और विद्युत (विजली) की तरह फुर्तीले वे अपनी जय की चाह करने लगे ।।११।।

दोनों ओर की सेना के वीर इस युद्ध रूपी समुद्र में खूब स्नान करते हुए, अतुल यशरूपी मोती ग्रहण करते हुए तथा अपने मन (असू-मन-प्राण) की मलिनता को धोते हुए धन्य हुए ।।१२।।

ब्राह्मणोचित (अर्थात् पवित्र पतिव्रता) कुलाङ्गनाओं के समान उस घमासान युद्ध की भूमि में निन्दित शोभा के दर्शन से भय और दया करने वालों का भय दूर हो गया ।।१३।।

(कुलाङ्गनाओं के कुभावनापूर्ण दर्शन से जैसे दोष होता है वैसे युद्ध में निन्दित श्री (हार, द्वेष आदि) को भी देखने में दोष)

---

१. युद्धतोर्बल । २. विद्युतोर्ज्जय । ३ कुलाङ्गनामिव ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

कुर्वतोवपिभिदाम्परस्परं
जानतोन्नंच[1] तथापितां क्वचित् ।

वीरता रस च येन मुह्यतो विक्लवं समुषितं समीयुषोः
वर्तमानमपि भेदमाप्तयोर्भेद एव न तयोर्यदप्यभूत् ।
नाद्भुतंत[१] तदपि यद्दिवा निशोरप्यभून्न सरजो व्रजोदयात्
एवमेव समरेऽमरार्चितेसु युधामानि सतोऽस्तु........।।१४।।

अपूर्ण ।

एक दूसरे को आपस में ही अलग करते थे तो भी जरा भी इसे नहीं जानते हुए—अपूर्ण, अस्पष्ट ।

और वीर रस से मूर्च्छित (मुग्ध), व्याकुल और नष्ट किये गये, उन आप्त पुरुषों के बीच, भेद के रहते हुए भी (शत्रुता होते हुए भी), वास्तव में भेद नहीं था, यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है, तो भी व्रजोदय से दिन और रात रज युक्त हो गये, धूल से भर गये। इस प्रकार के युद्ध में देवता द्वारा चाहा हुआ घोर युद्ध हुआ ।।१४।।

व्रज—(१) पशु समूह, (२) बादल ।

शुभं भवतु ।।

---

१. नादतं त–लिपिकार का प्रमाद है ।

---

1. नं च

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अनुक्रमणिका

भाग–१

पत्रांक १.३ अ, व प्रथम किरण–धार्मिक नियम प्रसंग।

द्वितीय किरण

पत्रांक १९ अ. श्लोक ४३

जलालुद्दीन अकबर

मुगल बादशाह सन् १५५६ ई० से सन् १६०५ ई० तक

श्लोक ५६

पृथ्वीनृप–पृथ्वीराज

आम्बेर के राजा भारमल का पिता।

भारहमल्ल (भारमल कच्छवाहा)

पृथ्वीराज का बेटा और आम्बेर का राजा था। यही सर्व प्रथम अकबर का मित्र बना। सांगानेर में इनका प्रथम सम्मिलन हुआ था जब अकबर अजमेर ख्वाजा मुइनुद्दीन की जियारत करने जा रहा था (सन् १५६२)

श्लोक ५७

भगवन्तदास

राजा भारमल का ज्येष्ठ बेटा और मानसिंह का पिता।

श्लोक ५८

कछवाहा

यह क्षत्रियों की एक जाति है, जो सूर्य वंश में श्री रामचन्द्र के पुत्र कुश से अपनी उत्पत्ति मानती है।

श्लोक ५९

श्री मानसिंह–१५८९-१६१४

यह भारमल का पोता और भगवन्तदास का पुत्र था। अकबर के राज्य को सुदृढ़ करने में इसका पूरा सहयोग रहा। 'मान प्रकाश' काव्य में इसकी वीरता और युद्ध का विस्तृत वर्णन है। चारों दिशाओं में विजय प्राप्त की है। काबुल, काश्मीर, पंजाब, बिहार, बंगाल, उड़ीसा, गुजरात तथा दक्षिण में कई युद्ध जीते और शासन किया। अकबर का इस पर पूरा विश्वास था और कृपापात्र भी हुआ।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

पत्रांक २१ अ.   श्लोक ७०

आमेरी (आमेर)

जयपुर राज्य की पूर्व राजधानी।

पत्रांक २२ अ.   श्लोक ८५

मथुरा

प्रसिद्ध तीर्थ, उत्तर प्रदेश में यमुना नदी के तट पर स्थित है। यही श्रीकृष्ण की जन्म भूमि है।

द्वारका

सौराष्ट्र (काठियावाड़) में सुदूर पश्चिम में समुद्र के किनारे स्थित प्रसिद्ध तीर्थ। श्रीकृष्ण ने इसे बसाया था और अपनी राजधानी बनाया था। मानसिंह ने इसे जीता था (मान प्रकाश)।

श्लोक ८६

वृन्दावन

प्रसिद्ध तीर्थ श्रीकृष्ण की लीला भूमि। यह देवालयों के लिये प्रसिद्ध है।

पत्रांक २२ ब.   श्लोक ९२-९३

कछवाह—जयपुर, अलवर

राठौर—जोधपुर, बीकानेर, किशनगढ़

भाटी—जैसलमेर

हाड़ा—हाड़ा कोटा-बूंदी सुरजन हाड़ा (रणथम्भोर)

टाक—टाक-क्षत्रियों की एक जाति है।

निर्बाण—चौहान राजपूतों की एक शाखा।

खीची—राधोगढ़ व खिलचीपुर (खीचीवाड़ा) मध्यप्रदेश

सिसोदी—(शिशोदिया)-मेवाड़ के अन्तर्गत।

पमार (परमार)—मालवा-धार में राजा भोज प्रसिद्ध हुआ।

सुलंकी (सोलंकी)—गुजरात।

बघेल—बघेल खण्ड में रहने वाले क्षत्रिय।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

चंदेल—चेदि के शासक।

गौड़—बंगाल में इनका राज्य था।

यादव—करोली।

तोमर—ग्वालियर (रामसिंह तोमर)

वएस-बैस

ये स्थानेश्वर में रहते थे, फिर कन्नौज को राजधानी वनाया। उत्तर प्रदेश में विशेषकर रहते हैं।

श्लोक ६४

चित्तौड़

राजस्थान (मेवाड़) का प्रसिद्ध किला। प्राचीन चित्रकूट - मौर्यों के समय भी इसकी ख्याति थी।

अलाउद्दीन खिलजी ने ईस्वी सन् १३०३ में जीता था, दूसरी वार गुजरात के बहादुर ने १५३५ और अकबर ने १५६८ में इसे जीता। चित्तौड़ के ये तीन साके प्रसिद्ध हैं।

रणथम्भोर

यह किला भी राजस्थान में प्रसिद्ध है। अलाउद्दीन ने इसे हम्मीर राव से १३०१ में तथा अकबर ने १५६९ में अपने अधीन किया। हाड़ा सुरजन और अकबर के बीच सुलह कराने का कार्य राजा भगवन्तदास और मानसिंह ने ही किया था।

कुम्भलमेरू (कुम्भलगढ़)

१५७८ में जीता गया। इसमें मानसिंह के साथ शाहबाजखाँ भी था। अन्त में मानसिंह बादशाह की सेवा में चला गया और शाहबाजखाँ ने किले को काबू में कर लिया।

श्लोक ६५

नल राजा नल

निषध देश का राजा था। दयमन्ती के साथ विवाह। आपत्ति पड़ने पर राजा ऋतुपर्ण का सारथी बना। देवताओं का उसे आशीर्वाद था।

पत्रांक २३ अ श्लोक १०२

अर्जुन

कुन्ती पुत्र। महाभारत का प्रधान वीर पात्र।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

राजा पृथु

अयोध्या के राजा बेरा का पुत्र इसी के नाम पर पृथ्वी का नामकरण हुआ।

श्लोक १०५

राणा नृप—१५७२-१५६७

महाराणा प्रतापसिंह (राणा कीका)। महाराणा उदयसिंह का ज्येष्ठ पुत्र।

मानसिंह और राणा का हल्दीघाटी (खमणोर, गोगुन्दा) के पास प्रसिद्ध युद्ध सोमवार, १८ जून १५७६ ईस्वी को हुआ उसी युद्ध का यहाँ आगे श्लोकों में विशद वर्णन है।

पत्रांक २४ अ श्लोक ११७

माधवसिंह

यह भगवन्तदास का दूसरा पुत्र और मानसिंह का छोटा भाई था। मनोहरसिंह कृत 'सोलहवीं सदी का राजस्थान' पृष्ठ १२०।

पत्रांक २४ ब श्लोक १२२

दुर्योधन

धृतराष्ट्र का सबसे बड़ा पुत्र। यह बड़ा हठीला था। इसी के कारण ध्वंसकारी महाभारत का युद्ध हुआ था।

कर्ण

कुन्ती का सबसे बड़ा पुत्र। अधिरथ और उसकी पत्नी राधा द्वारा पालन पोषण होने से इसे अधिरथ और राधेय भी कहते हैं। इसने पाण्डवों के विरुद्ध दुर्योधन की महाभारत युद्ध में सहायता दी थी।

पत्रांक २६ अ श्लोक १४३

गूर्ज्जर गूजर

एक प्राचीन जाति, गुर्जर प्रतिहार जिनमें से एक वर्ग क्षत्रिय माना जाता है। इन्दा प्रतिहार पश्चिम राजस्थान और अन्य प्रतिहार उत्तर प्रदेश में, उत्तरी मध्यप्रदेश में इनकी बहुलता है।

मालवीय

यह जाति पहले पंजाब में रहती थी। वहां से ग्रीकों द्वारा पराजित होने पर वह अवन्ती और आकर प्रांत में चली आई और तदनन्तर यही अवन्ती आकर प्रदेश अब मालवा कहलाता है।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मल्लोई जाति आजकल कृषक जाति है जो उत्तर पश्चिमी मालवे में खाती (बढ़ई नहीं) कहलाती है।

वैदर्भ

बरार देश के रहने वाले।

द्रविड़

सुदूर दक्षिण में रहने वाली प्राचीन जाति।

मलय

मैसूर प्रान्त में मलयगिरि समीपवर्ती देश में रहने वाले।

द्वारका

ऊपर श्लोक ८५। पत्रांक २२ अ देखो।

बेदर

बीदर राज्य वहमनी राज्य के टूटने पर अन्य मुस्लिम राज्यों के साथ-साथ यह भी स्वतन्त्र हो गया था। इस समय यहाँ का सुल्तान बरीद शाही खानदान का था।

श्लोक १४५

सौराष्ट्रा

सौराष्ट्र (लाट देश या काठियावाड़) में रहने वाले।

तैलंगा

तैलंग देश (तेलिंगाना) पूर्वी आंध्र के प्रदेश में रहने वाले।

चोला

चोल (प्राचीन राज्य जो दक्षिण में था) बहुत समृद्ध राज्य था।

पत्रांक २७ अ श्लोक १५३

जलधि

सन् १५७३ में गुजरात पर चढ़ाई हुई। मिर्जा मुजफ्फर शाह द्वितीय को १५७३ में हराया और गिरफ्तार कर लिया किन्तु वह १५७८ में किसी प्रकार भाग गया और उपद्रव खड़ा कर दिया, कई स्थल जीत लिये। अन्य मिर्जा लोग भी इसमें सम्मिलित हो गये। माही के उस पार उन्हें रोके रखे। अकबर बहुत जल्दी सीकरी से रवाना हुआ। मानसिंह भी उज्जैन से सूरत की ओर जा रहा था। किन्तु उपद्रवी सरखेज और नादोत स्थानों पर हरा दिये गये। मुजफ्फर भाग गया १५८४ में, किन्तु अन्त में पकड़ा गया। उसने

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

आत्महत्या कर ली। मानसिंह को सीकरी लौटने का हुक्म हो गया तो वह लौट गया – यही भाव लेकर मान प्रकाश में—एवं सिंधु वचो निशम्य नृपतिस्तत्याज तल्लज्जितः कहा।

किरण ४

पत्रांक ३० अ श्लोक ११

रसाष्ट रन्ध्रे गणिते सनाख्ये

यह उत्तर दिग्विजय के लिये जाने का समय है। रसषड्रस ६, अष्ट ८, रन्ध्र ९ (शरीर में ९ छिद्र माने गये हैं) अंकानां वामतो गतिः—के काव्य प्रणाली के अनुसार अंक उल्टे गिने जाते हैं। इस तरह यह ९८६ हिजरी सन् होता है, तदनुसार वि. सं. १६३६ और ई. सन् १५७९ होता है।

श्लोक १२

सिंधु

भारत की मुख्य नदी जो उत्तर में हिमालय से बहकर अरब सागर में गिरती है।

श्लोक १३

हुमायू—१५३०–४०–५६

बाबर का बड़ा बेटा और अकबर का पिता था। शेरशाह सूरी ने इसे चौसा के युद्ध (१५४० ई.) में हराकर भगा दिया। उन्हीं संकट के दिनों में १५४२ में उमरकोट में अकबर का जन्म हुआ था। सूर वंश के निर्बल होने पर हुमायूँ ने पुनः राज्य प्राप्त कर लिया था। किन्तु कुछ ही महिनों के बाद सीढ़ियों पर से गिरने के कारण वह मृत्यु को प्राप्त हो गया।

श्लोक १४

सैदखाँन (सैय्यदखाँ)

यह पंजाब का सूबेदार था। इसी की अधीनता में राजा भगवन्तदास तथा अन्य कछवाहा सरदार पंजाब में नियुक्त किये गये थे। यह बिहार और बंगाल का भी सूबेदार नियुक्त किया गया था। जब काबुल और पंजाब में शांति हो गई तो राजा मानसिंह को बिहार का और बाद में बंगाल का सूबेदार बनाया गया था, क्योंकि वहां अफगान लोगों का उपद्रव तीव्र हो गया था।

मिर्जा ईसफ युसुफ खाँ

यह युसुफ काश्मीरी से भिन्न है।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मिर्जा मुहम्मद युसुफ खाँ

यह रोहतक (रोहित) किले पर नियुक्त किया गया था। मानसिंह के साथ कई युद्धों में रहा था।

श्लोक १५

मुबारक खाँ

कमाल खाँ गक्खड़ का लड़का। भगवानदास, मिर्जा शाह शाहरुख और शाह कुली मरहम के साथ कश्मीर में बादशाही सेना में रहा था। सन् ३० इलाई आईन-ए-अकबरी।

श्लोक १८

पंजाब देश

भारत के उत्तर में स्थित है। सिंधु नदी के पूर्व का प्रदेश, इसमें सतलज, व्यास, रावी, चिनाव और झेलम नदियां बहती हैं। अतः इसे पंच नद भी कहते हैं। महाभारत काल में पांचाल देश यही था।

पत्रांक ३० व श्लोक १९

लाहौर देश

लाहौर (लवपुर) रावी के तट पर स्थित प्रसिद्ध नगर है। इसी के आस-पास का क्षेत्र लाहौर देश था।

श्लोक २०

छालकोट–स्यालकोट

महाभारत काल में यह शल्य राजा की राजधानी था। यूनानियों के समय में यह मिनन्डर की राजधानी रहा। उस समय कह शगल (शाकल) भी कहलाता था।

रोहित कुध्र दुर्ग–पहाड़ी किला

वर्तमान में रोहतक (रोहतास) पंजाब में है। बिहार के रोहतास से यह भिन्न है। ३२° ३५′ उत्तर ७३° ४८′ पूर्व, झेलम शहर से १० मील उत्तर पूर्व में स्थित।

श्लोक २५

मुरारिदास

यह बडहरा कुल में उत्पन्न हुआ था। इसके पिता का नाम परशुराम था। उत्तर दिग्विजय के समय इसका मानसिंह से परिचय हुआ और इसकी योग्यता देखकर मानसिंह ने इसे अपना मन्त्री बनाया। वीर होने के साथ-साथ यह कवि भी था। 'मान-प्रकाश' की रचना इसी के द्वारा ई. सं. १६०४-१४ के बीच कभी हुई है।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

श्लोक २६

वडहरा कुल

वडहरा यह खत्रियों की जाती है न कि क्षत्रिय। खत्रियों में चारें प्रमुख शाखाएं हैं–१. बारी २. बनजाही ३. सरीन ४. खोखराज। इन चारों में भी कई उप शाखाएं हैं। इन्हीं में से वडहरा खत्री भी हैं। क्षत्रियों के वंशों में इसका कहीं नाम नहीं। खत्री भी भल्ला, खन्ना, मेहरा, मलहोत्रा, टंडन, सिरीन, बेरी, वारी, अरोड़ा आदि कई होते हैं, इन्हीं में से यह भी एक शाखा हो सकती है।

पत्रांक ३१ अ श्लोक २८

परशुराम

मुरारिदास का पिता जो धर्मनिष्ठ और विश्वासु व्यक्ति था।

श्लोक ३०

शंकरदास

यह मुरारिदास का दूसरा छोटा भाई था। यह विद्वान् और वीर था।

राय सुन्दर (सुन्दरदास)

मुरारिदास का सबसे छोटा भाई। परशुराम का तीसरा पुत्र। यह बंगाल में मघराज की लड़ाई में वीरता पूर्वक लड़ा था। पत्रांक ६६ अ श्लोक ५

पत्रांक ३१ ब श्लोक ३५

जम्बुगिरि दुर्गराज

वर्तमान जम्मू नगर जो तवी नदी के पूर्वी तट पर स्थित है। जम्मू राज्य का वंटवारा हुआ तो कपूरदेव के वेटे जगदेव और सामिलदेव ने अपनी अलग-अलग राजधानियां बनाईं। वाहु २३° ४४' उत्तर, ७४° ५३' पूर्व, तवी नदी के पश्चिमी तट पर स्थित है, किले पर जगदेव बड़े का अधिकार रहा और जम्मू २३° ४४' उत्तर, ७४° ५२' पूर्व, तवी नदी के पूर्वी तट पर स्थित है पर सामिलदेव का। तवी नदी दोंनों राज्यों के वीच वहती है। तवी के पश्चिम वाहु में वाहुवाल शाखा चली और तवी के पूर्व जम्मू मे जमवाल। दोनों का मूल कुल मन्हास (मल्हास) ही है। जगदेव ने १५६०-८५ तक तथा उसके पुत्र परसराम ने १५८५ से १६२० तक राज्य किया। १५८८-८९ के उपद्रव में परसराम ने भी भाग लिया था। १५९४-९५ में दूसरा उपद्रव हुआ उसमें भी यह वादशाह के विरुद्ध रहा था। अन्त में यह मुगल साम्राज्य में मिला लिया गया।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

कपूरदेव

मल्हास वंश (मल्हास वंश पंजाब पर्वतीय राज्य, जि० २, पृष्ठ ५१६) में उत्पन्न हुआ था। जम्मू का राजा था। ई.स. १५६० में इसकी मृत्यु हुई थी। युद्ध का प्रसंग इस समय को देखते हुए विवादास्पद हो जाता है क्योंकि मानसिंह उसके पिता और दादा के साथ अकबर की सेवा में ई. स. १५६२ में आता है। (पंजाब पहाड़ी राज्य जि० २, हिल स्टेट्स ५३५-३८

मल्हास वंश

यह सूर्य वंश से ही निकला हुआ वंश है। मल्हास वंशी छोटे भाइयों के वंशज हैं। अब कृषि कर्म करने से इनका सम्मान कम हो गया है। ये लोग रावी और झेलम के बीच की भूमि में रहते हैं।

मालदेव

मल्हास वंशी राजा था। इसी का वंशज कपूरदेव था। इसी ने जम्मू की पुरानी मण्डी में चौदहवीं शताब्दी में महल बनवाये थे।

पत्रांक ३२ अ   श्लोक ४५

तदीयं तनयं

कपूरदेव के दो पुत्र जगदेव और सामिलदेव में कोई एक होना चाहिये। बड़ा पुत्र जगदेव था और सामिलदेव छोटा और दूसरी रानी का था।

त्रिकूट

यह त्रिकूट पर्वत जम्मू के उत्तर में अवस्थित है और यह तीर्थ माना जाता है। तिरिकोटा राज्य भी था।

लालदेव

त्रिकूट के समीपवर्ती भूमि का राजा। सम्भव है तिरिकोटा राज्य का हो, जो जम्मू से ही निकला और यह वहाँ का स्वामी हो।

श्लोक ४७

बदरिकावधि

बद्रीनाथ-उत्तर का प्रसिद्ध तीर्थस्थल जो अलकनन्दा के तट पर हिमालय में स्थित है। यह चार प्रमुख धामों में से एक हैं।

जयचन्द १५७०-८५

यह कांगड़ा का राजा था। नगरकोट इसकी राजधानी थी। उसके विरोध करने पर शाही सेना ने नगरकोट पर आक्रमण किया। जयचन्द बन्दी

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

बनाकर दिल्ली भेजा गया। इसके पुत्र विद्धिचन्द ने भी इसके बाद बलवा किया। जयचन्द को छोड़ा गया और वह पुनः राजा हुआ। १५८५ में मृत्यु हुई। उसके बाद उसका बेटा विद्धिचन्द ने १५८८-८९ के विप्लव में भाग लिया था और इसका मुख्य हाथ था। पंजाब हचिन्सन व व्होगल कृत, 'हिस्ट्री ऑफ दी पंजाब स्टेट्स', १९३३, खण्ड १-२। पृष्ठ १४०-५३

नगरकोट

पंजाब के पहाड़ी राज्य कांगड़ा की यह राजधानी था।

अकबर के समकालीन यहां के राजा—

१. धर्मचन्द १५२८-१५६३
२. माणिक्यचन्द १५६३-१५७०
३. जयचन्द १५७०-८५
४. विद्धिचन्द (वृद्धिचन्द) १५८५-१६०५ थे।

श्लोक ४८

चम्पा (चंबा)

पंजाब के पहाड़ी राज्यों में से यह एक प्रसिद्ध राज्य था। अकबर के समकालीन राजा निम्नलिखित थे—

१. गणेश वर्मा १५१२-१५५९
२. प्रतापसिंह वर्मा १५५९-१५८९
३. वीर वाहन १५८६-१५८६
४. बलभद्र १५८९-१६१३ कोई १६२३ तक मानते हैं, यह बड़ा दानी राजा था। राज्य से अलग होने पर भी बिना दान दिये भोजन नहीं करता था। पंजाब०, २, पृष्ठ २९७-३००।

भड्डू राज्य

इसका प्राचीन नाम सुमाता, सुमार्ता मिलते हैं। बालोर राज्य के पश्चिम में स्थित है। कोट भर्ता नाम भी मिलता है। १५८८, १५९४ के उपद्रव में भी यह नाम मिलता है।

करिधान पाल, अनन्त पाल, जरनन पाल, अभिमान पाल १५९८-१६३५ अकबर के समय अनुमानित होते हैं। जि० २, ६३३

गोआलियर

यही वर्तमान समय में गुलेर नाम से प्रसिद्ध है।

१. रामचन्द्र १५७० तक

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

२. जगदीशचन्द १५७०-१६०५

पंजाब०, २, पृष्ठ २०१-२०२।

दाढौ आल–वर्तमान दातारपुर राज्य।

राजा दातारचन्द ने १५५० के आस पास इसकी नींव डाली। यह सिवा राज से निकला है, जो गुलेर राज्य से निकला है।

सिवा राज्य के राजा मानकचन्द के तीसरे पुत्र लखुदाहचन्द ने दाढ़ा में निवास किया था। इसी दाढ़ा से दढवाल नाम हुआ। दातारपुर राज्य का राजवंश दढवाल कहलाया। मान-प्रकाश में दाढौ आल यही वंश या राज्य प्रतीत होता है।

दातारचन्द के बाद इस वंश में १० राजा हुए। अकबर के समकालीन-
१. गणेशचन्द, २. चतरचन्द, ३. उदयचन्द, हो सकते हैं।
पंजाब०, २, पृष्ठ २१२।

पैठन

(प्रतिष्ठानपुर, नूरपुर, पठानकोट) तंवर वंशीय क्षत्रिय ओझा पृ. ४८६।

१. बख्तमल १५१३-५८

२. पहाड़ीमल १५५८-१५८०

कनिंघम ने इसका नाम बिहारीमल और तवारीख में तख्तमल लिखा है।

३. वासदेव (वासुदेव) १५८०-१६१३।

वासुदेव ने १५८८-८६, १५६४-६५ के उपद्रव में भाग लिया था। हसन बेग और टोडरमल उस पर भेजे गये थे। वह हसन बेग के साथ दिल्ली आ गया। सलीम के विद्रोह में उससे मिल गया था। जहांगीर ने उसे ३,५०० का मंसव दिया था। वह मेवाड़ पर भी भेजा गया था। वह महाराणा अमरसिंह से मीरावाई की पूजी हुई मूर्ति लाया था, जो अब नूरपुर में ब्रजराज स्वामी के नाम से पूजी जाती है।

ओझा, उदयपुर का इतिहास, जि० १, पृष्ठ ४८६ टिप्पण।

वासुदेव ने धामेरी को अपनी नई राजधानी बनाया। जहांगीर के यहां आने पर उसके सम्मान में वासुदेव के पुत्र जगतसिंह ने इसका नाम नूरपुर रखा, तभी यह राज्य ही नूरपुर कहलाया। 'मान-प्रकाश' में प्राचीन नाम ही "पैठान"–(प्रतिष्ठानपुर) है।

पंजाब०, २, पृष्ठ २२२-२२७।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

शाम्बा

यह राध्य १४०० ई. में स्थापित हुआ। यह जम्मू राज्य के पूर्व में तथा जम्मू-जसगोटा के बीच में स्थित है। राजा का नाम अनिश्चित। वंजाब २, पृ० ५७४-५

जसरोटा

यह राज्य रावी नदी के पश्चिम की ओर सिवालिक पहाड़ियों के बाहरी क्षेत्र में अवस्थित है।

राजा भाबूदेव ने १५८८-८९ और १५९४-९५ के उपद्रवों में पजाब पहाड़ी राज्यों के अन्य राजाओं के साथ सम्मिलित हुआ था। पंजाब०, २, पृ० ५६८, ५७१।

मानसुकोट

वर्तमान नाम मानकोट तथा रामकोट, मआसिर-उल्-उमरा में राजा प्रताप देव का नामोल्लेख हूआ है। इसने १५८८-८९ के उपद्रव में भाग लिया था, ऐसी जानकारी मिलती हैं। पंजाब०, २, पृ० ५६५-६६।

वाह (वाहेन्द्र)

जम्मू के राजा कपूरदेव के पश्चात् उसके बेटे जगदेव और सामिलदेव में राज्य का बंटवारा हुआ। तवी के तट पर वाहु (वाह) का स्वामी जगदेव हुआ। वाहेन्द्र राज जो 'मान प्रकाश' में आया है, सम्भव है वह यही हो। वैसे भद्रवाह राज्य भी पर्वतीय राज्यों में एक राज्य है। अन्तिम पद 'वाह' का ग्रहण हो तो यह भद्रवाह राज्य का राजा होना चाहिये। सम्भवतः तब भक्तधाल राजा होगा। पंजाब०, २, पृ० ६२१-२।

हैताल

वर्तमान में यह चनेहनी राज्य है। प्राचीन हिम्ता (हिउन्ता) था। हिम बर्फ को कहते हैं। यह वर्फीला स्थान होने से हिम्ताल या हिन्ताक नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसी का अपभ्रंश रूप हैताल प्रतीत होता है। इसके उत्तर में चिनाव, पूर्व में भद्रवाह राज्य, दक्षिण में गद्दियन धार और बन्द्रालता तथा पश्चिम में विरहों का नाला है। पंजाव०, २, ५७८-७९।

जैराल

यह राजपूतों की एक जाति है जो होशियारपुर के आस पास द्रासूय तहसील के उत्तर पूर्व में बहुतायत से पाई जाती है। इस जाति के ब्राह्मण भी वहां पाये जाते हैं जो राज गिरि तालुका के हम्मीरपुर तहसील कांगड़ में

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

रहते हैं। कृषि कर्म करने से इन दोनों का दर्जा अब कम हो गया है। पंजाब की जातियों का कोष–जि० २, पृ० ३५७। जराल जाति राजौर में भी रहती है। देखो राजौर (राजोरी राज्य)।

राजौर—प्राचीन नाम राजपुरी

यह राज्य पीर पंजाल, पूँछ, कोटली, भीम्बर और चिनाव द्वारा घिरा हुआ है।

जराल नाम की जाति (जो सम्भवतः क्षत्रिय भी माने जाते हैं) यहां रहती है।

उस समय यहां का राजा सरमस्त खाँ १५८०-१६०० अकबर से मिल गया था। काश्मीर विजय के उपलक्ष्य में इसे खिलअत और ५०,०००/– की जागीर मिली थी। अकबर तीन वार काश्मीर गया था। तब हर समय वह राजौर होकर ही वहां गया था।

ताजुद्दीनखाँ १६००-१६४८। पंजाब० २, पृ० ६८४-५।

श्लोक ५१ और ५२

हिमाचलान्तरमलं देवालयं

गिरिशं (गिरीशं) शचीश चतुरास्याद्या नमस्यन्ति जाताः शंभु पदेप्सवोवत दिवं हित्वा मुकुन्दादयः से अभिप्राय केदारनाथ का ही निकलता है। उत्तरा खण्ड के प्रधान तीर्थों में केदारनाथ का स्थान है। यात्रा कठिन है, शीत भी अधिक है।

'मान प्रकाश' के अनुसार मानसिंह का वहां जाना सिद्ध होता है।

पत्रांक ३३ अ

श्लोक ५५

काश्मीर भूमिपतिः

काश्मीर भारत का उत्तरी सुन्दर प्रदेश है। अलीखाँ चाक ही काश्मीर भूमि-पति है। इसका राज्य काल अकबर के समय, काश्मीर विजय १५८६ तक रहा। इसका लड़का यूसुफ तथा पोता याकूब विरोध करने पर विहार में मानसिंह की निगरानी में भेजे गये थे। फिर बंगाल के उपद्रवों में मानसिंह के साथ रहकर यूसुफ उपद्रवियों से लड़ा था।

आइन-ए-अकबरी अं०अ, सं० २, ३७५।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

अलीखाँ चाक
यूसुफखाँ
याकूबखाँ

इसी किरण ४ के श्लोक १४ की टिप्पण भी देखो।

श्लोक ५६

ईसफ खाँ—यूसुफ खाँ काश्मीरी

अलीखाँ चाक का बेटा। यह गिरफ्तार कर मानसिंह के अधीन बिहार भेजा गया था। छूटने पर काश्मीर का राजा बना, किन्तु काश्मीर सदा के लिये मुगल साम्राज्य में मिला लिया गया था। बंगाल के उपद्रवों में यह मानसिंह के साथ उन्हें दबाने में रहा था।

श्लोक ५७

कुंकुम मही—केसर भूमि काश्मीर को ही कहते हैं।

किरण ५

पत्रांक ३३ ब

श्लोक २

शालकोट—स्यालकोट

देखो किरण चार श्लोक २०, पत्रांक ३० ब।

सिंधु नदी

देखो किरण ४, श्लोक १२ की टिप्पण।

नीलावक

सिंधु के किनारे नीलाव स्थान जो अटक से १ मील नीचे समीप ही है। इसी नाम की एक छोटी सी नदी भी है जो यहीं सिंधु नदी में मिल जाती है। नीलाव एक किला है इसीलिए कभी-कभी वहां सिंधु नदी भी नीलाव नाम से जानी जाती है।

श्लोक ३

भगवन्तदास

देखो किरण २, श्लोक ५७ टिप्पण।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

ईसफ खाँ–यूसुफ खाँ, देखो किरण ४, श्लोक १४ टिप्पण ।
सैद खाँ वही ।

नीलाबपुर

देखो निलावक श्लोक २ टिप्पण ।

पंजाब देश

देखो किरण ४, श्लोक १८ टिप्पण ।

पत्रांक ६६ अ

श्लोक १

महासिंह

यह मानसिंह के बड़े पुत्र जगतसिंह का पुत्र था । बंगाल में उस्मानखाँ के बलवे को दबाने के लिये जगतसिंह भेजा गया था, किन्तु वह मार्ग में ही मर गया । यह वीर था और मानसिंह को भी प्रिय था । इसकी स्मृति में इसकी पत्नी ने आमेर में जगत शिरोमणि मन्दिर बनाया जो अब भी विद्यमान है । उसके बाद मानसिंह ने जगतसिंह के पुत्र महासिंह को (उसके) काका प्रताप-सिंह कछवाहा की अभिभावकता में उसमान के विरूद्ध बंगाल भेजा । इस समय महासिंह की आयु केवल १५ वर्ष की थी । इस आयु में भी उसने वीरता पूर्ण कार्य किया ।

श्लोक २

त्रिपुरा

बंगाल के पूर्वी भाग में यह राज्य स्थित है । इसके पूर्व में ब्रह्म देश की सीमा आ लगती है ।

कामरूप

वर्तमानकाल में यह आसाम प्रान्त का एक भाग है ।

उसमान

कुतुलुगखाँ का भतीजा था । मानसिंह, जिस समय अजमेर में वायु परिवर्तन के लिये ठहरा हुआ था, उसी समय उसमान खाँ ने साम्राज्य के विरूद्ध सिर उठाया । मानसिंह ने अपने बड़े बेटे जगतसिंह को भेजा किन्तु वह मार्ग में मर गया । तब मानसिंह ने जगतसिंह के १५ वर्ष के पुत्र महासिंह

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

को प्रतापसिंह कछवाहा की अभिभावकता में उसमान को दवाने के लिये भेजा। उसमान ने शाही सेना को दबा दिया, तो मानसिंह तुरन्त सेना लेकर आ गया। भूषणा और श्रीनगर के केदारराय को उसमान ने अपनी ओर मिला लिया। वाज घोग्रा के जलाल खाँ ने भी बलवा कर दिया। महासिंह ने यहां बड़ी वीरता का काम किया। कालिन्द्री नदी को धैर्य के साथ पार किया यद्यपि उसके सैंकड़ों साथी वह गये। उपद्रवियों को भगा दिया। उसमान ने ब्रह्मपुत्र पार कर मुगल हाकिम बाज वहादुर कुलमाक को भावल के किले में घेर लिया। यह जानकर मानसिंह ढाका से यहाँ आया और बनार नदी के किनारे उसमान को हराया। विक्रमपुर के ईसा खाँ के बेटे मूसा खाँ और भूषणा श्रीनगर (पुर) के केदारराय को इच्छामती के पार भगा दिया। उसमान ने मघराज (अराकान) का भी सहयोग प्राप्त कर लिया था। एगार सिंदूर (मेमनसिंह) जिला के सीमावर्ती क्षेत्र में उसमान आदि का उपद्रव हुआ था।

श्लोक ३

एगारसिंदूर (उपान्ते – समीपे)

इसे आजकल पूर्व बंगाल स्थित मेमनसिंह जिला कहते हैं। यह ढाका के उत्तर में हैं। ईसा खाँ का उपद्रव हुआ उसमें केदारराय और सुलेमान ने भूषणा का किला ले लिया। मानसिंह ने अपने पुत्र दुर्जनसिंह को भेजा। किले में तोप के फूटने से सुलेमान मर गया। (देखो श्लोक १-२ के टिप्पण, पत्रांक ६६ अ) केदार घायल होकर (श्लोक ४) भाग गया और ईसा खाँ से मिल गया। १५९६ में मानसिंह की वीमारी का इन लोगों ने लाभ उठाया। ईसा खाँ ने जोर पकड़ा मानसिंह ने अपने पुत्र हिम्मतसिंह को उसको दबाने के लिये भेजा। एगारसिंदूर लूटा गया और उपद्रवी जंगलों में भाग गये १५९७ ई०। इस पर कूच बिहार के राजा लक्ष्मीनारायण ने अपनी वहन वरभावती (अवला देवी) का विवाह मानसिंह से करके मित्रता करली किन्तु उसका भाई पत कुंवर ईसा खाँ से मिल गया। वह कुछ दिनों में मर गया। १५९७ ई० में हिम्मतसिंह हैजे से मर गया। ईसा खाँ ने फिर सिर उठाया तो दुर्जनसिंह उस पर भेजा गया किन्तु वह युद्ध में मारा गया। मानसिंह ने दुःखी होकर हमला किया, किन्तु ईसा खाँ ने सन्धि कर ली। मानसिंह इसके बाद बंगाल छोड़कर लौट आया।

श्लोक ४

हेमतसिह (हिम्मतसिंह)

देखो टिप्पण एगारसिन्दूर।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

मानसिंह का पुत्र सन् १५६७ में बंगाल में हैजे से मर गया। यह रतनसिंह अखैराजोत रणजीत सोनगरा की बेटी जामेती का, जो मानसिंह की एक राणी थी, बेटा था।

कुशलसिंह

मानसिंह के पुत्र हिम्मतसिंह का पुत्र था।

श्लोक ५

मघाधिप—मघराज

वर्तमान अराकान जो पूर्वी बंगाल और ब्रह्म देश की सीमा बनाता है। अराकान पर्वत इसी प्रान्त में अवस्थित हैं।

अराकान के समुद्री डाकुओं ने ढाका के आस-पास लूटमार करनी प्रारम्भ कर दी। त्रिमोहिनी स्थान को घेर लिया तो मुगल किलेदार मुसलमान कुली कुलमाक घायल होकर भाग गया। इस पर मानसिंह ने इब्राहीम बेग, अतका, रघुदास, आसकरण, दलपत राय को सेना देकर भेजा। अराकानी दल पीछे हट गया। कई मारे गये और कई युद्धपोत डुवा दिये गये। इस समय केदारराय मघराज के साथ मिल गया। श्रीनगर पर धावा किया। मानसिंह ने तोपखाना भेजा। विक्रमपुर के पास भारी युद्ध हुआ। केदारराय घायल हुआ और पकड़कर लाया गया किन्तु आते ही उसके प्राण पखेरू उड़ गये। कई पुर्तगाली और बंगाली नाविक मारे गये। इसके बाद मानसिंह भावल किले से महाराजा के विरूद्ध गया किन्तु मघराज अपने देश को भाग गया। उसमान पर जो इस संघर्ष में फिर सम्मिलित हो गया था, हमला किया गया किन्तु परिस्थिति प्रतिकूल देखकर वह भी भाग गया। इस प्रकार १६०४ ई० तक बंगाल में शांति हो गई।

मानसिंह—राजीव नयनप्रसाद कृत जीवनी तथा बंगाल का इतिहास, भाग २।

रायसुन्दर

मुरारिदास का छोटा भाई परशुराम का छोटा पुत्र बडहरा खत्री वंश का था। मघराज के साथ युद्ध में शाही सेना में रहकर लड़ा।

श्लोक ७

बंदर दुर्ग

यह ढाका बंदरगाह माना जा सकता है। अथवा भावल दुर्ग जो नदी

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

के तट पर है। ढाका से उत्तर में जहां से मानसिंह ने एगारसिंदूर (मेमनसिंह) और मघराज के युद्ध का संचालन भी किया था।

भाग—२

व्यक्ति-नाम	किरण	विवरण
१. अकबर बादशाह जलालुद्दीन	२,३,४,५	दिल्ली का बादशाह हुमायूँ का पुत्र (१५५६-१६०५ ई०)
२. भारहमल (भारमल)	२	आमेर के राजा कछवाहा राजपूत
३. भगवन्तदास	२,४,५	भारमल का ज्येष्ठ पुत्र
४. मानसिंह	२	भगवन्तदास का ज्येष्ठ पुत्र
५. राणा	२	राणा प्रताप मेवाड़ पति
६. माधवसिंह	२	मानसिंह का छोटा भाई
७. सैदखाँ	४,५	अकबर के उमराव, उत्तर दिग्विजय में मानसिंह के साथ
८. ईसफखाँ (मिर्जा) मोहम्मद यूसुफखाँ	४,५	अकबर के उमराव, उत्तर दिग्विजय में मानसिंह के साथ, रोहित किले पर नियुक्त।
९. मुबारकखाँ	४	अकबर के उमराव, उत्तर दिग्विजय में मानसिंह के साथ
१०. राय मुरारिदास (भल्ला खत्री) क्षत्रकुल प्रसूत-खत्री भी अर्थ हो सकता है।	४, पृ० ६६	वडहरा क्षत्रिय, परशुराम का पुत्र मानसिंह का मन्त्री
११. परशुराम	४	राय मुरारिदास का पिता
१२. शंकरदास	४	परशुराम का दूसरा पुत्र
१३. सुन्दर (दास)	४, पृ० ६६	परशुराम का तीसरा पुत्र
१४. कपूरदेव		मल्हास वंशी, जम्बुगिरि का राजा
१५. मालदेव	४	मल्हास वंशी, इसने जम्मू के पुरानी मंडी स्थान पर महल बनाये थे। पंजाब १४वीं सदी में हिल स्टेट्स २, पृ० ५२१
१६. लालदेव	४	त्रिकूट गिरि के पार की भूमि का राजा।
१७. जयचन्द	४	नगरकोट का राजा (कांगड़ा)
१८. नाम नहीं : भड्डू का राजा	४	भड्डू राज्य का राजा

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१९. ईसफ खान, यूसुफ खान उड़ीसा में मानसिंह के साथ	४	काश्मीर के सुल्तान का बेटा, बाद में यही काश्मीर का राजा, जो अकबर के अधीन किया गया।
२०. महासिंह	पत्रांक ६६	मानसिंह के ज्येष्ठ पुत्र जगतसिंह का ज्येष्ठ पुत्र
२१. हेमतसिह	"	मानसिंह का तीसरा पुत्र, हिम्मतसिह
२२. कुशलसिंह	"	हेमतसिह का पुत्र, जो निःसंतान मरा
२३. उसमान	"	विहार, बंगाल में जागीर, बाद में उपद्रव किया।

क्षत्रिय वंश

१. कछवाहा
२. राठौर
३. भाटी
४. हाड़ा—चौहानों की एक शाखा
५. टाक
६. निर्वाण—चौहानों की एक शाखा
७. चौहान
८. खीची–चौहानों की एक शाखा
९. सीसोदिया
१०. परमार
११. सोलंकी
१२. बघेल–सोलंकियों की एक शाखा
१३. चंदेल
१४. गौड़
१५. यादव
१६. तोमर
१७. वैस

स्थान	किरण	विवरण
१. भरत खण्ड	२	
२. आमेरी नगरी	२	आमेर जयपुर राज्य की पूर्व राजधानी
३. वृन्दावन	२	व्रज का प्रमुख तीथ
४. चित्तौर	२	दुर्ग-मेवाड़
५. रणथम्भोर	२	दुर्ग-जयपुर
६. कुम्भलमेर	२	दुर्ग-मेवाड़
७. दिल्ली	२	भारत की राजधानी
८. द्वारका	२,३	सौराष्ट्र में प्रमुख तीर्थ
९. सिन्धु तीर	४,५	भारत की प्रमुख नदी पंजाब सिंध में बहती है।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

१०. पंजाब	४,५	देश
११. लाहौर	४	नगर (पंजाब)
१२. स्यालकोट	४,५	महाभारत काल में शल्य राजा की राजधानी
१३. रोहित	४	पहाड़ी किला
१४. जम्बुगिरि	४	जम्मू-जम्बू लोचन नाम के राजा ने तवी के तट पर बसाया। पंजाब २, पृ० ५२१
१५. त्रिकूट	४	पर्वत, जम्मू के उत्तर में तीर्थ स्थल, वही०, पृ० ५४७
१६. बदरिका	४	बद्रीनाथ, उत्तराखण्ड का तीर्थ
१७. नगरकोट	४	
१८. चम्पा	४	
१९. गोग्रालियर	४	गुलेर राज्य
२०. दाढ़ोग्राल	४	कांगड़ा और कुलू के बीच बंगहल स्टेट थी। बड़ा बंगहल धौला घाट के उत्तर में है, यही धौला घाट दाढोग्राल है। दातारपुर में दढवाल जाति का आधिपत्य, सम्भव है यहीं दाढोग्राल का रूप हो। पंजाब०, १, पृ० ५७-५८।
२१. पैठान	४	नूरपुर या पठानिया
२२. शाम्बा	४	शाम्बा राज्य
२३. जसरोट	४	जसरोटा राज्य
२४. मानसुकोट	४	मानकोट राज्य
२५. वाह (वाहेन्द्र)	४	बाहु का किला तवी नदी के तट पर। कपूरदेव के दो बेटे, जगदेव और सामलदेव, दोनों में राज्य के लिये झगड़ा हुआ ये सौतेले भाई थे। जगदेव वाह का अधिकारी रहा और सामल जम्मू का। वाहेन्द्र यही जगदेव है।
२६. हैताल (हिंता) प्राचीन नाम भड्डू	४	चनेहनी राज्य के शासकों की जाति हन्ताल, भड्डू
२७. जैराल	४	राजौरी राज्य के शासकों की जाति जैराल।
२८. देविका निम्नगा	४	गंगा नदी, प्रसिद्ध नदी।
२९. काश्मीर	४	देश कुंकुम मही।

CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

३०.	राजौर	४	काश्मीर स्थित नगर।
३१.	*नीलावक	५	नीलावपुर अटक से १ मील नीचे की ओर सिन्ध-सागर दोआब में।
३२.	त्रिपुरा	६६ पत्र	पूर्व भारत में
३३.	कामरूप	,,	आसाम
३४.	मघ	,,	सुदूर पूर्व भारत में, अराकान बर्मा की सीमा पर।
३५.	एगारसिंदूर	,,	जिला मेमनसिंह, बंगाल १५९५ ई०
३६.	बन्दर दुर्ग	,,	,,
३७.	बेदर	४	बीदर दक्षिण में

१.	मालवीया:	मालव देश के
२.	वैदर्भा:	विदर्भ के रहने वाले
३.	द्रविडा:	द्रविड़ देशवासी
४.	मलय:	मैसूर, मलय (चंदन) गिरि से।
५.	द्वारका	द्वारका राज्य वाले
६.	सौराष्ट्रा:	सौराष्ट्र देश के
७.	तैलंगा:	तैलंग (आंध्र) देश के।
८.	चौला:	चोल प्रान्त के—मद्रास।
९.	बेदर:	बेदर राज्य का।
१०.	गुजरा:	गुजरात के वासी।

---

* नीलावक, पंचम किरण, श्लोक २ और नीलावपुर श्लोक ३ एक ही है– सिंधु नदी को नीलाव (नीलाब) लिखा मिलता है। नील+आव अर्थात् नीला पानी।

टॉड राजस्थान–खड्ग विलास प्रेस सं०, पृ० २३३, पाद टिप्पण। ओझाजी द्वारा सम्पादित।

अतः नीलाब नदी भी है और इसी नाम का किला होने से नीलावक या नीलावपुर नाम हुआ।

भारमल का अकबर से मिलन सांगानेर में जनवरी १५६२। दुबारा सांभर में।

रणथम्भोर को सुरजन हाड़ा से जीतना सन् १५६८-६९ ई०, भगवन्तदास और मानसिंह ने सुलह कराई।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

गुजरात विजय १५७२। मिर्जा मुजफ्फर खाँ हरा दिया गया। फिर उपद्रव भी दवा दिये गये, बादशाह स्वयं सेना लेकर गया था। बंगाल १५७६ में दाउद खाँ को मारकर जीत लिया गया था।

राणा के साथ हल्दी घाटी का युद्ध सोमवार, जून १८, १५७६। राजा मानसिंह, आसफ खान।

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

T CC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy

TCC-0. RORI. Digitized by Sri Muthulakshmi Research Academy